

जून २००७

कीमत - रु. १०

दादावाणी



आत्मविज्ञानी 'ए.एम.पटेल' के भीतर प्रकट हुए
'दादा भगवान के असीम जय जयकार हो'

तंत्री तथा संपादक :

दीपक देसाई

वर्ष: २, अंक : ८

अखंड क्रमांक : २०

जून २००७

संपर्क सूत्र :

त्रिमंदिर, सीमंथर सीटी,
अहमदाबाद-कलोल हाइ वे,

पो.ओ. : अडालज,

जि. : गांधीनगर-३८२४२१

फोन : (०७९)३९८३०१००

e-mail :

dadavani@dadabhagwan.org

अहमदाबाद : (०७९)

२७५४०४०८, २७५४३९७९

मुंबई : (०२२) २४१३७६१६

राजकोट त्रिमंदिर :

९९२४३ ४३४१६

U.S.A. : 785-271-0869

U.K.: 020-8204-0746

Website : www.dadashri.org

www.dadabhagwan.org

Publisher, Owner & Printed by :

Deepak Desai on behalf of
Mahavideh Foundation

5, Mamtapark Society,
Bh. Navgujarat College,
Usmanpura, Ahmedabad-14.

Printer/Press :

Mahavideh Foundation

Basement, Parshvanath
Chambers, Nr.RBI,
Usmanpura, Ahmedabad-14.

सबस्क्रिप्शन (सदस्यता फी)

१५ साल का

भारत : ८०० रूपया

यु.एस.ए. : १०० डॉलर

यु.के. : ७५ पाउन्ड

वार्षिक

भारत : १०० रूपया

यु.एस.ए. : 10 डॉलर

यु.के. : 7 पाउन्ड

भारत में D.D. / M.O.

‘महाविदेह फाउन्डेशन’ के
नाम से भेजे।

दादावाणी

आज्ञा पालन हेतु चाहिए दृढ निश्चय

संपादकीय

इस काल के महान ज्ञानी पुरुष श्रीमद् राजचंद्रजी ने अपने वचनामृत के प्रत्येक पृष्ठ पर बार-बार इस बात पर जोर देकर लिखा है कि, ‘मोक्ष प्राप्त करने, आत्मज्ञान प्राप्त करने, प्रत्यक्ष ज्ञानी पुरुष की खोज करें और ज्ञानी पुरुष के मिलने पर उनकी आज्ञा का पालन करें, उसके बाद भी अगर मोक्ष प्राप्ति नहीं हो तो मुझ से आकर लेना’, ऐसी गारन्टी दी है। वर्तमान ज्ञानी पुरुष परम पूज्य दादा भगवान (दादाश्री) भी इसी बात को दोहराते हुए बताते हैं कि, ‘मेरी भेंट होने के बाद यदि यहीं से मोक्ष नहीं बरते तो हम सच्चे ज्ञानी नहीं हैं और मोक्ष भी सच्चा नहीं है। मोक्ष यहीं पर ही, पंचमकाल (इसी कलियुग) में बरतना चाहिए।’ दादा भगवान के ‘अक्रम विज्ञान’ द्वारा केवल दो ही घंटे में आत्मज्ञान प्राप्त होता है और प्रथम स्टेज का मोक्ष यानी अज्ञान से मुक्ति का यहीं पर ही प्रत्यक्ष अनुभव होता है और ज्ञान बीज की रक्षा हेतु ज्ञानविधि के बाद जो पाँच आज्ञाएँ प्राप्त होती हैं, वही अंतिम मोक्ष, पूर्णाहुति करानेवाली हैं।

ज्ञान प्राप्ति के बाद महात्मा जैसे-जैसे पाँच आज्ञा का पालन करते जाते हैं, वैसे-वैसे ज्ञान दशा दूज में से तीज, चौथ होते होते पूनम होने के मार्ग पर आगे बढ़ती है। आत्मज्ञान प्राप्त होने पर अनंत अवतारों का अज्ञान हट जाता है और खुद ‘शुद्धात्मा’ पद प्राप्त करता है, ‘पुरुष’ (आत्म) पद की प्राप्ति होती है। तब से पुरुष का सही पुरुषार्थ शुरू होता है, जो आज्ञा पालन रूपी पुरुषार्थ है। ज्ञानी पुरुष की आज्ञा आत्म रमणता प्राप्त करानेवाली है और संसार प्रवेश में प्रतिरोधक है।

ज्ञानी पुरुष ने कलियुगी जीवों के लिए रास्ता कितना आसान कर दिया है कि, ‘तुझे केवल आज्ञा पालन का निश्चय ही करना है, आज्ञा अनुसार हुआ कि नहीं यह तुझे नहीं देखना है। आज्ञा पालन का दृढ निश्चय कर और जितनी नहीं पाल सका, चूक गया उसका प्रतिक्रमण कर कि, हे दादाजी! मुझ से इस जगह आज्ञा पालन नहीं हो पाया इसके लिए मुझे क्षमा कीजिये, फिर से ऐसी भूल नहीं करूँगा।’ इतना यदि बोल दिया तब भी दादाजी कहते हैं कि, ‘पूरा पास हो गया, हंड्रेड परसेन्ट मार्क्स दे देंगे, निन्यानवे नहीं देंगे।’ अब इससे ज्यादा क्या चाहिए? यह करुणा, कृपा का मार्ग जो ठहरा।

ये आज्ञाएँ तो संसारभर के सारे शास्त्रों का निचोड़ हैं सारा। ज्यों-ज्यों आज्ञा पालन का निश्चय दृढ होता जाये और उसे निरंतर सिन्सियर रहें तो अपने आप निरंतर सहजता बढ़ती जाये और ज्ञान दशा बढ़ती जाये।

पाँच आज्ञा में रहना है ऐसा भाव रखना और आज्ञा को सही मानों में समझ लेना, इन दोनों में से आज्ञा को सही रूप से समझ लेने से अधिक अच्छा और कुछ नहीं है। बिना समझे पालन करने जायें तो उसमें कुछ बरकत नहीं है। इससे भी आगे तो, पहले यह ‘विज्ञान’ सुनें, समझें और उसे खो न बैठे इस हेतु से ये पाँच आज्ञाएँ हैं। विज्ञान पूरा समझ लें तो पाँच आज्ञा पालने की शक्ति उत्पन्न होगी। हमारा निश्चय और दादा भगवान के आशीर्वाद और कृपा से निश्चय ही आज्ञा पालन होगा और वही आज्ञा ऐसे भीषण कलियुग में भी पूर्ण दशा, आत्मा के स्पष्ट वेदन तक पहुँचायेगी, यही अभ्यर्थना।

दीपक देसाई ...✍

पाठकों से...

‘दादावाणी’ सामायिक में मुद्रित पाठ्य सामग्री मूलतः गुजराती ‘दादावाणी’ का हिन्दी रूपांतर है। कोष्ठक में दिये गये शब्द या तो अंग्रेजी शब्द का अर्थ है अथवा शब्द का तात्पर्य स्पष्ट करने हेतु वृद्धित किये गये वाक्यांश है। यहाँ पर ‘आत्मा’ शब्द को गुजराती और संस्कृत की तरह पुल्लिङ्ग में प्रयोग किया गया है। पाठक जहाँ पर भी चंदुभाई नाम का प्रयोग हुआ है, वहाँ पर खुद को समझें। ‘दादावाणी’ के इस अंक में अगर कोई बात आप समझ न पायें तो प्रत्यक्ष सत्संग में पधार कर समाधान प्राप्त करें। भाषांतर में कोई कमी नज़र आये तो हमें सूचित करने की कृपा करें। ऐसी क्षतियों के लिये हम आपके क्षमाप्रार्थी हैं।

आज्ञा पालन हेतु चाहिए दृढ निश्चय

मुक्ति के दो स्टेज

मुक्ति दो प्रकार से, पहली अज्ञानमुक्ति यानी आत्मा आत्मस्वभाव में आया वह, दूसरी है तो संपूर्ण देहमुक्ति यानी सिद्धगति की प्राप्ति। यहाँ से एकावतारी हो सकते हैं। अज्ञान मुक्ति होने से क्या फायदा होता है? सांसारिक दुःखों का अभाव रहा करे। मनुष्य क्या खोजता है?

प्रश्नकर्ता : दुःख का अभाव।

दादाश्री : आत्मा स्वभाव से सुखिया है ही और फिर दुःख का अभाव हुआ, फिर शेष क्या रहा?

प्रश्नकर्ता : आत्मा जानने की कोई चाबियाँ तो होगी न?

दादाश्री : चाबियाँ-बाबियाँ कुछ नहीं होती, ज्ञानी के पास जाकर बोल देना कि, ‘साहब, मैं बिना अक्ल का, सर्वथा मूर्ख हूँ, अनंत अवतार से भटकता हूँ पर आत्मा का एक अंश, बराबर भी मैं आत्मा पहचान नहीं पाया हूँ, इसलिये मुझ पर कुछ कृपा बरसाइये और मेरी बिगड़ी बना दीजिये।’ बस, इतना ही करना है। ज्ञानी पुरुष तो मोक्षदान करने ही आये हैं।

मोक्षदान प्राप्ति के बाद फिर लोग शोर मचायेंगे कि अब व्यवहार का क्या होगा? आत्मा जानने के पश्चात् जो शेष रहा वह सब व्यवहार। ज्ञानी पुरुष फिर व्यवहार का भी ज्ञान जुटाये। पाँच आज्ञा देकर कहें कि, ‘मेरी ये पाँच आज्ञा का पालन करना, जा, तेरा व्यवहार भी शुद्ध और निश्चय भी शुद्ध! जिम्मेदारी सब

हमारी।’ मोक्ष यहीं से बरतना चाहिए। यहीं से नहीं बरते तो वह सच्चा मोक्ष ही नहीं है। मुझसे भेंट होने के बाद यदि यहीं से मोक्ष नहीं बरतता तो ऐसे ज्ञानी सच्चे नहीं हैं और मोक्ष भी सही नहीं है। मोक्ष यहीं, इस पंचमकाल में बरतना चाहिए, यहीं पर इस कोट-टोपी के साथ।

आज्ञा पालन ही पुरुषार्थ

प्रश्नकर्ता : दादाजी, आपने अज्ञान हटाकर पुरुष बनाये, यानी कौन-सा हिस्सा पुरुष कहलाये?

दादाश्री : ज्ञान वही पुरुष और जो अज्ञान है वह प्रकृति। ज्ञान-अज्ञान का संयुक्त स्वरूप वह प्रकृति, और ज्ञान वही परमात्मा, वही पुरुष।

प्रश्नकर्ता : पुरुष को क्या पुरुषार्थ करना होता है?

दादाश्री : यह आज्ञारूपी, और कौन-सा? आपका आज्ञारूपी और मेरा आज्ञा के बगैर। आपका पुरुषार्थ आज्ञा के आधार पर होता है, वही पुरुषार्थ मेरा बगैर आज्ञा के होता है। अंत में ज्यों-ज्यों प्रेक्टिस होती जायेगी, फिर आज्ञा धीरे-धीरे विलिन होती जायेगी, सिर्फ उसकी जड़ें रह जायेगी।

प्रश्नकर्ता : परमात्मा का स्वभाव तो ज्ञाता-द्रष्टा ही है न?

दादाश्री : मूलतः उसका स्वभाव ही ज्ञाता-द्रष्टा है और पुरुष माने क्या? अभी पुरुषोत्तम हुआ नहीं है। पुरुषोत्तम होने पर परमात्मा कहलाये। यह पुरुष होने के बाद वह पुरुषोत्तम हो रहा है।

दादावाणी

प्रश्नकर्ता : आत्मा तो शुद्ध ही है, फिर उसे पुरुषोत्तम होना कहाँ रहा?

दादाश्री : 'आत्मा' शुद्ध है वह तो आपकी प्रतीति में है, ऐसा नहीं है कि आप हो गये हैं, आपको ऐसा होना है अभी। कैसे होना है? तब कहे, आज्ञा पालन करके।

प्रश्नकर्ता : आज्ञा का पालन कौन करता है? प्रतिष्ठित आत्मा पालन करता है?

दादाश्री : प्रतिष्ठित आत्मा को पालने का सवाल ही कहाँ है इसमें? यह तो 'आपको' जिन आज्ञाओं को पालना है न, वह आपकी जो प्रज्ञा है वह 'आपसे' सब करवाती है। आत्मा की प्रज्ञा नामक शक्ति है वह, इसलिये और क्या रहा फिर? बीच में किसी का दखल ही नहीं है। उन आज्ञाओं का पालन करना। अज्ञाशक्ति करने नहीं देती और प्रज्ञाशक्ति करने दे। उन आज्ञाओं का पालन करना। यानी आपको 'मैं शुद्धात्मा हूँ' यह प्रतीति में है और लक्ष में है। अनुभव में थोड़ा है मगर अभी आप उस रूप हुए नहीं हैं। तद् रूप होने, पाँच आज्ञा का पालन करने पर तद् रूप होंगे।

प्रकृति के फॉर्स के सामने आत्मशक्ति

प्रश्नकर्ता : प्रकृति का फॉर्स इतना क्यों होता है कि देखना तक भूला देता है?

दादाश्री : आत्मा की शक्ति उतनी कम कहलाये। यदि शक्ति अधिक होती तो प्रकृति चाहे कितनी भी फॉर्सवाली क्यों नहीं होती, फिर भी उससे 'वह' अलग ही हो जाता।

प्रश्नकर्ता : आत्मा की शक्ति तो सभी की समान ही होती है न?

दादाश्री : खुद जितना आत्मा रूप होता है उतनी ही शक्ति होती है। 'खुद' कितना आत्मा रूप हुआ है?

प्रश्नकर्ता : आत्मारूप किसे होना है?

दादाश्री : खुद को ही आत्मारूप होना है न? सेल्फ को ही। तुझे जो आत्मा दिया है (भान करवाया है) वही तो है मूल आत्मा।

प्रश्नकर्ता : शक्तिवाला कैसे होना यह समझ में नहीं आया।

दादाश्री : जितना आज्ञापालन होगा उतनी शक्ति बढ़ती जायेगी, यानी प्रकट होती जायेगी। मूल आत्मा की शक्ति सभी को समान होती है पर आज्ञा पालन कम-ज्यादा मात्रा में होने से उसके अनुसार कम-ज्यादा शक्ति प्रकट होती है। धीरे-धीरे बढ़ती हुई पूर्णता तक पहुँचती है।

प्रश्नकर्ता : जहाँ तक वह प्रकृति का फॉर्स होता है वहाँ तक आज्ञा भी पालने नहीं देता। सब प्रकृति के कारण खड़ा है। उसमें खुद की इच्छा तो होती है।

दादाश्री : प्रकृति को लेकर कोई आपत्ति नहीं है। निश्चय करने पर सब ठीक हो जाये। खुद चेतन है और प्रकृति तो निश्चेतन है। यानी चेतन को निश्चेतन क्या कर सकता है?

प्रश्नकर्ता : दोनों साथ-साथ है, वहाँ तक प्रकृति बाधारूप होती है।

दादाश्री : 'खुद' के मजबूत होने पर बाधारूप नहीं होती।

प्रश्नकर्ता : तो ज्ञान लेने के बाद जो खुद की प्रकृति को देखता है, वह खुद कौन देखता है?

दादाश्री : वही, आत्मा ही देखे न! और कौन देखेगा? सब आत्मा ही। आत्मा यानी प्रज्ञा समझना उसे। उसे सीधा आत्मा मत समझना। आत्मा यानी पहले प्रज्ञा ही यह सब कार्य करती है मगर हम आत्मा बोलते हैं। बोलने के लिए आत्मा बोलते हैं उतना ही।

दादावाणी

प्रश्नकर्ता : जिस प्रकृति को वह देखता है, वह प्रकृति शुद्ध कहलाये या जब उसके तत्त्वों को देखे तब शुद्ध कहलाती है?

दादाश्री : प्रकृति को जब से देखना शुरू किया, तब से 'खुद' तत्त्व स्वरूप हुआ, तब प्रकृति भी शुद्ध हो गई। जब तक अहंकार है, तब तक प्रकृति शुद्ध नहीं कहलाती।

निश्चय करे कौन ?

प्रश्नकर्ता : निश्चय कौन करे? क्या एक नंबर की फाइल निश्चय करे?

दादाश्री : 'आपको' खुद को ही निश्चय करना है।

प्रश्नकर्ता : मतलब शुद्धात्मा निश्चय करे?

दादाश्री : नहीं, नहीं, शुद्धात्मा नहीं, उसकी प्रज्ञा शक्ति, प्रज्ञा शक्ति निश्चय कराये बिना रहती ही नहीं! ज्ञान मिलने के साथ ही निश्चय कर डालती है।

प्रश्नकर्ता : आप ऐसा कहते हैं, 'तुझे इसमें आज्ञा पालन करने की बात नहीं है, तू निश्चय कर कि तुझे आज्ञा में रहना है बस, और सब मुझ पर छोड़ दे।'

दादाश्री : आज्ञा पालनी ही है केवल। आज्ञा अनुसार हुआ कि नहीं हुआ यह हमें नहीं देखना है। आज्ञा पालन करना है यह तय करना, इतना ही काफी है।

प्रश्नकर्ता : मतलब जो निश्चय करने की बात है उसमें हम ऐसा कहते हैं कि, 'तुझे करना कुछ नहीं है।' फिर ऐसा कहते हैं कि, 'निश्चय करे।'

दादाश्री : वे तो शब्द हैं न! उस तरह के ड्रामेटिक शब्द, उसमें कर्ताभाव नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : हाँ जी, वह तो भाषा तक की सीमित बात हुई, पर यह जो निश्चय है, वह कौन करता है?

दादाश्री : यह प्रज्ञाशक्ति है न, वही निश्चय करती है।

प्रश्नकर्ता : मगर जब ज्ञान नहीं था तब अहंकार निश्चय करता था, तब प्रज्ञा नहीं थी न?

दादाश्री : सही है। वहाँ अहंकार नहीं, अज्ञा निश्चय करती थी, अब प्रज्ञा करती है। अज्ञानी के सारे निश्चय अज्ञा करे और जिन्हें यह ज्ञान प्राप्त हुआ है, उनके सारे निश्चय प्रज्ञा करे। अज्ञा और प्रज्ञा, यह दो शक्तियाँ हैं। अज्ञा जो है वह रोंग बिलिफ है और प्रज्ञा वह राइट बिलिफ है।

प्रश्नकर्ता : वह निश्चय करती है ऐसा कहने के बजाय निश्चय रखना चाहिए ऐसा कहें तो सही होगा क्या?

दादाश्री : शब्द चाहे सो बोलिए, करना कि रखना इसका कोई सवाल नहीं है। करना या रखना, जिस शब्द से हमारी धारणा सिद्ध होती हो उसे रखना।

प्रश्नकर्ता : प्रज्ञा निश्चय करती है या करवाती है?

दादाश्री : वह निश्चय करती है, करवाती है, सब एक में ही आता है। मतलब वे कुछ अलग-अलग नहीं होते हैं।

प्रज्ञा में तन्मय कैसे रहना?

यह सारा कार्य प्रज्ञाशक्ति का ही है पर जब प्रज्ञाशक्ति अपना कार्य नहीं सम्हालती, तब वह 'डिस्चार्ज' अहंकार सारा कार्य किया करता है। वह जो करता हो उसे हमें देखना है कि वह किसमें तन्मयाकार हुआ है? वह प्रज्ञा में तन्मयाकार रहना चाहिए, उसके बजाय अज्ञा में तन्मयाकार हो जाये, स्लिप हो जाये। 'जागृति' होने पर वह प्रज्ञा में रहेगा, अज्ञा में जाने पर 'अजागृति' रहेगी!

प्रश्नकर्ता : आपने यह जो ज्ञान दिया है, इसलिये उसे जागृति में तो रहना होता है।

दादावाणी

दादाश्री : इच्छा तो होती है पर रह नहीं पाता न! आदत से मजबूर है न? आदती होने के कारण उस ओर झुकाव रहता है। फिर भी, जिसका भाव स्ट्रोंग है वह तो जाने पर भी वापस बुला ले कि 'एय, नहीं जाना है वहाँ'। खुद को पता तो चल जाये न?

प्रश्नकर्ता : प्रज्ञा में तन्मयाकार रहने को कहा तो ज़रा ठीक से स्पष्टीकरण करके समझाइये न, कि कैसे रहा जाये?

दादाश्री : सिन्सिअर रहना। किसके प्रति सिन्सिअर है? यदि हम मोक्ष में जाना चाहें तो प्रज्ञा को सिन्सिअर रहें। यदि संसारी सुख का आस्वाद लेना चाहें तो थोड़ी देर उधर हो आयें। उस समय कर्मों का उदय ले जाये वह बात अलग है। कर्मों का उदय घसीटकर ले जाये तो भी हम इस ओर ही रहने पर जोर दें। नदी का बहाव मझधार में ही खिंचेगा पर हमें किनारे की ओर जोर लगाना चाहिए। नहीं लगाना चाहिए क्या? कि जिस ओर खिंचकर ले जाये उस ओर खिंच जाना चाहिए?

प्रश्नकर्ता : मतलब यदि उसका निश्चय पक्का हो तो सिन्सिअर रहे न?

दादाश्री : पक्का होने पर ही रह पाये! वना जिसका निश्चय ही नहीं है, उसका फिर क्या ठिकाना? नदी जिस ओर ले जाये उस ओर जाये, किनारा तो कहीं का कहीं रह गया! और हमें तो किनारे की ओर खिंचना चाहिए। नदी बीच की ओर खिंचे और हमें हाथ-पैर मारकर किनारे की ओर जाना चाहिए। थोड़ा-बहुत जो बन पाये उतना किनारे की ओर जायें, ऐसा करते करते पैर ज़मी को छू लेंगे, फिर किनारा मिल लग जायें।

अर्थात् इस विज्ञान से मोक्ष के लिये सावधान करनेवाली प्रज्ञाशक्ति उत्पन्न हो जाती है। फिर उसे बहुत ही पोझिटिव रहना चाहिए। नेगेटिवसेन्स नहीं रखनी चाहिए। पोझिटिव माने उसमें हमारी स्वीकृति होनी चाहिए। सभी पोझिटिव ही रहते हैं, फिर संसार

में किसी प्रकार की अड़चने नहीं छूने देती। खुद सही तरीके से रहे तो संसार की अड़चने छू न पाये ऐसी व्यवस्था भीतर हो जाती है, क्योंकि आत्मा प्राप्त नहीं हुआ था यानी भगवान प्राप्त नहीं हुए थे, तब भी संसार चल रहा था तो क्या आत्मा प्राप्त होने के बाद कुछ बिगड़ थोड़े जायेगा? तब कहे, नहीं बिगड़ता।

आज्ञा पाले उतना सहज

प्रश्नकर्ता : आज्ञा भी फिर एक अरसे के बाद सहज हो जाती है।

दादाश्री : धीरे-धीरे सब सहज हो जाये। जिसे पालना है उसके लिए सहज होती जाती है। यानी खुद का मन ही उस प्रकार से ढल जाता है। जिसे पालन करना है और जिसका निश्चय है, उसके लिए कोई मुश्किल है ही नहीं। यह तो उच्च कोटि का, सुंदर विज्ञान है और निरंतर समाधि बनी रहती है। गालियाँ सुनाये तब भी समाधि नहीं हटती, घाटा होने पर भी समाधि नहीं हटती, अपने घर को जलता देखने पर भी समाधि बनी रहती है।

प्रश्नकर्ता : प्रज्ञाशक्ति का इतना विकास होता है कि आज्ञाएँ सारी भीतर बुन जाती है।

दादाश्री : बुन जायें। प्रज्ञाशक्ति पकड़ ही लेती है। ये पाँच आज्ञाएँ जो हैं न, वे सारे संसार के सभी शास्त्रों का अर्क ही है सारा!

प्रश्नकर्ता : दादाजी, यह पाँच आज्ञा पालने का निश्चय जो है, उसकी गणना किसमें होती है?

दादाश्री : वह सब आत्मा में नहीं समाता, आत्मा की रक्षा हेतु है। उसकी गणना पुद्गल में होती है। (पुद्गल माने रिलेटिव-रियल सारा, निन्यानवे तक पुद्गल।)

प्रश्नकर्ता : यानी पुद्गल उसमें (आत्मा में) एकाकार नहीं हो जाये इसके खातिर है?

दादाश्री : एकाकार नहीं हो जाये और बाहरी

दादावाणी

वातावरण आत्मा को छू नहीं पाये, इसलिये आज्ञा बीच में रक्षापंक्ति है, प्रोटेक्शन।

प्रश्नकर्ता : यानी कर्मोदय के कारण यदि हम एकाकार हो जाते हैं पर आज्ञा पालन का निश्चय हो तो हमारी मदद होती है, ऐसा?

दादाश्री : हाँ, उदय के समय रक्षा करे। आप आज्ञा पालें तो कर्म के उदय आपको छूते ही नहीं। जिसे आज्ञा पालना है, उसे कुछ नहीं छूता।

प्रश्नकर्ता : दादाजी, हंड्रेड परसेन्ट आज्ञा माने शत प्रतिशत उपयोग हो गया न?

दादाश्री : शत प्रतिशत होता ही नहीं मनुष्य को, मैं ने कहा है न कि सत्तर प्रतिशत पाले तो बहुत हो गया। यदि शत प्रतिशत पाले कोई, तो वह भगवान ही हो गया कहलाये।

आज्ञा चूके ? कीजिये प्रतिक्रमण

प्रश्नकर्ता : दादाजी, हम जहाँ कहीं आज्ञा चूकते हैं वहाँ उपयोग चूकते हैं क्या?

दादाश्री : चूके ही न वह तो, मगर उसकी बहुत चिंता मत करना। हमें तो अब यही देखना है कि प्रगति कैसे हो। चूकना तो है ही, भूलें तो होंगी ही। भूलें तो जितनी दिखाई दी उतनी जाती रहेंगी और जाती रही मतलब शक्ति प्रदान करती जायेंगी। जिस भूलों को लेकर जो अशक्ति आई थी, उन भूलों के जाने से शक्ति उत्पन्न होती है। भूलें ही मालिक हैं, दूसरा कोई मालिक नहीं है। ब्लैंडर्स (मैं चंदूभाई हूँ माननेवाला अहंकार) तो गये।

हमारा ज्ञान ऐसा है कि अपने आप निरंतर सहज होता ही जाये। ज्यों-ज्यों वक्त गुजरता जाये, त्यों-त्यों सहजता प्राप्त करता जाये। आपको केवल हमारी आज्ञा का आराधन करना है ऐसा निश्चित रखना है। आराधना हो कि नहीं हो इसका प्रश्न नहीं है। आपको निश्चित रखना है कि हमें आज्ञा नहीं चूकना

है। फिर चूक गये, उसके लिए आप जोखिमदार नहीं है। इस दुष्काल में यदि इतनी छूट नहीं दी जाये तो कौन मोक्ष पा सके?

प्रश्नकर्ता : कभी-कभार आज्ञा विस्मृत अवश्य हो जाती है पर दिल में तो यही होता है कि आज्ञा पालनी ही है।

दादाश्री : विस्मृति हो जाने पर उसका प्रतिक्रमण करना। मनुष्य हमेशा जितना भूल जाये, उसमें उसका गुनाह नहीं बनता है। इसलिये तो मैं ने उसके उपाय जुटाये हैं न कि जब याद आये कि आज्ञा की विस्मृति हो गई थी, तब आप उसका प्रतिक्रमण करना कि, 'दादाजी, मुझ से आज्ञा का पालन नहीं हो सका, दो घंटे तो यों ही निकम्मे गँवाये, मुझे क्षमा करना। फिर से ऐसी भूल नहीं करूँगा।' इतना यदि बोल दिया तो सारा का सारा पास हो गया। हंड्रेड परसेन्ट मार्क दे देंगे, निन्यानवे नहीं देंगे। अब इससे ज्यादा क्या चाहिए आपको?

आज्ञा में रहने पर आप के काम सहज भाव से पूरे हो जायें। इस पर लोग कहें, 'दादाजी, आपकी कृपा से हो गया।' पर इसमें कृपा नहीं होती। कृपा तो कभी कोई मुश्किल आये तब होती है। यह तो आज्ञा में रहने की वजह से सहज भाव से निकल जाये। यह तो विज्ञान है।

पहले समझे, बाद में बरते

प्रश्नकर्ता : पाँच आज्ञा में रहना है ऐसा भाव करना और आज्ञा को ठीक से समझ लेना, इन दोनों में से किसका फल जल्दी से मिलता है?

दादाश्री : आज्ञा को समझ लेना इसके समान तो और कुछ नहीं है। समझ लेने के बाद अपने आप सहज पालन होता रहे। बिना समझे आज्ञा पालन करने जाये तो उसमें कोई लाभ नहीं। फिर भी महात्मा लोग कुछ न कुछ करेंगे, उसके पीछे जो लगे हैं न?

प्रश्नकर्ता : मतलब अब आज्ञा केवल एक्झेक्ट

दादावाणी

(यथातथ्य) समझ लेनी है और आत्मा जो पूर्ण स्वरूप है उसे भी एक्झेक्ट समझ लेना है, ऐसा न?

दादाश्री : आत्मा तो मैं ने दे ही दिया है। इन आज्ञाओं को समझे तो वह आत्मा को समझकर ही बैठा है। अब तो आज्ञा वही धर्म और आज्ञा वही तप, मगर ऐसा करने के लिए कभी फुरसत मिलनी चाहिए न?

प्रश्नकर्ता : आज्ञा ऐसी वस्तु है कि उसमें टाइम फेक्टर की ज़रूरत ही नहीं है।

दादाश्री : हाँ, उसमें टाइम फेक्टर ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : जहाँ से अनुसंधान टूटा हो वहाँ से फिर से जोड़कर भी आज्ञा का सातत्य बनाये रखा जा सकता है न?

दादाश्री : हाँ, वहाँ से जोड़ ले।

प्रश्नकर्ता : दादाजी का जो साइन्स है, उसे पहले समझ लें तो पाँच आज्ञा में रह सकें कि पाँच आज्ञा समझ लें तो वहाँ से विज्ञान की शुरुआत होती है?

दादाश्री : पहले विज्ञान सुने और समझे, फिर उसकी रक्षा के लिए पाँच आज्ञा है। वह विज्ञान खो न जाये इसलिये पाँच आज्ञा है।

प्रश्नकर्ता : अब यह जो मन-बुद्धि-चित्त हैं, उन्हें हम कब समझ पायें? जब पूर्ण रूप से पाँच आज्ञा में रह पायें तो फिर उन पर उपयोग आ सके न?

दादाश्री : ऐसा उपयोग नहीं रह पाया तो कोई हर्ज नहीं है। मन-बुद्धि की हमें ज़रूरत नहीं है। पाँच आज्ञा में रहें तो समझो बात बन गई। पाँच आज्ञा पालें तो बहुत हो गया।

प्रश्नकर्ता : कई बार ऐसा होता है कि पहले दादाजी का विज्ञान समझ लें तो फिर आज्ञा पालन 'ऑटोमेटिक' हो ऐसा है।

दादाश्री : आज्ञा पालनेवाला खुद पालना चाहे तो पाली जाये। निश्चय होने पर पाल सके। विज्ञान पूरा समझ लेने पर आज्ञा पालन की शक्ति उत्पन्न होती है।

यह तो तीर्थकरों के अलावा आत्मा संबंधी कोई निःशंक हुआ नहीं है। केवल श्री कृष्ण भगवान जैसे क्षायक सम्यक् ज्ञानी थे, वे आत्मा को लेकर निःशंक हुए थे और आप आत्मा के बारे में निःशंक हो गये हैं। आपको अब शंका नहीं रही कि आत्मा ऐसा होगा या वैसा होगा? कि रही है शंका अभी भी?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : मतलब, आत्मा से निःशंक हो गये। अरबों रुपये देने पर भी यह पद मिलनेवाला नहीं है, यह बात आज के लोगों की समझ में नहीं आती। यह तो इतना बड़ा, बहुत ऊँचा पद है।

व्यवस्थित की खोज का किया था नियाणा

यह ज्ञान अपूर्व कहलाता है, क्योंकि आज तक यह ज्ञान प्राप्य नहीं था। यह 'व्यवस्थित' की मेरी खोजबीन लम्बे अरसे से चली आई है। मैं इसी खोज में था कि यह जगत किस आधार पर चल रहा है? इसकी खोजबीन करने के बाद यह 'व्यवस्थित' रखा गया है। 'व्यवस्थित' जान लिया फिर शेष क्या रहा? समाप्ति हो गई फिर क्या रहा? सारा ज्ञान प्राप्त हो जाये।

हमने यह जो 'व्यवस्थित' दिया है न, वह एक्झेक्ट (यथातथ्य) 'व्यवस्थित' है। हमने तय किया था कि हमें 'व्यवस्थित' मिलेगा तो ही हमें मोक्ष में जाना है, हमारा नियाणा (किसी एक वस्तु की प्राप्ति के लिए अपना सारा पुण्य लगाकर उसकी प्राप्ति की कामना करना) था। इसलिये हमें यह मिला और सब को दिया, एक्झेक्ट 'व्यवस्थित'।

'व्यवस्थित' कोई गप्प नहीं है। गप्प नहीं चलता, आज्ञा के रूप में नहीं दिया जा सकता।

व्यवहारिक शब्द आज्ञा के रूप में नहीं दिया जा सकता। यह निश्चय-व्यवहार का शब्द है।

अहंकार छूटने पर सब व्यवस्थित

प्रश्नकर्ता : ऐसा प्रश्न उपस्थित होता है कि क्या यह सबकुछ व्यवस्थित है?

दादाश्री : नहीं, सबकुछ व्यवस्थित नहीं है। यदि अहंकार चला जाये, तो यह सबकुछ व्यवस्थित है।

प्रश्नकर्ता : हमारे ज्ञान लेने के पश्चात्...

दादाश्री : ज्ञान लेने के पश्चात् 'बिलकुल व्यवस्थित ही है।' यदि हमारी आज्ञा पाले तो हमारी दूसरी कोई बिलिफ है ही नहीं। आज्ञा नहीं पालने पर तो औरों की तरह ही हो गया न!

प्रश्नकर्ता : अब आज्ञा कैसे पालें और कैसे नहीं पालें?

दादाश्री : जिसे आज्ञा पालन का निश्चय है, वह सत्तर प्रतिशत आज्ञा पालें तो हमें एतराज नहीं है। पर निश्चय उसका होना चाहिए। आप समझें?

पाँच आज्ञा व्यवस्थित के अधीन नहीं

प्रश्नकर्ता : पाँच आज्ञा पालने का निश्चय करना यानी वह व्यवस्थित के अधीन नहीं है न?

दादाश्री : नहीं, वह व्यवस्थित के अधीन नहीं। वह केवल अगले भव में पुण्य बंधे ऐसा नया पुरुषार्थ है। उस भव में फिर वहाँ प्रभु के पास बैठे-बैठे, बिना मेहनत के घर में बैठे-बैठे सब आ मिले। संयोग आदि चाहिए न? ऊस अपर क्लास की सारी तैयारियाँ है। आया समझ में?

निश्चय हमें करना पड़े। व्यवस्थित निश्चय नहीं करता।

निश्चय तो करना ही पड़े

प्रश्नकर्ता : आप कई बार ऐसा कहते हैं कि

भाव कीजिये, भाव कीजिये पर जब आप ज्ञान प्रदान करते हैं तब भाव तो निकाल देते हैं?

दादाश्री : यह भाव तो निश्चय है। पूरन भाव उड़ गया, गलन भाव रहा। जीवित भाव उड़ गया, अब निर्जीव भाव रहा, डिस्चार्ज भाव।

प्रश्नकर्ता : डिस्चार्ज भाव में फिर करने को कुछ रहता नहीं है, वह तो अपने आप होता ही रहे।

दादाश्री : पर भाव निश्चित तो करना चाहिए। हमें जिस गाँव जाना है वह (ध्येय) तो निश्चित करना पड़े न?

प्रश्नकर्ता : यानी भाव का मतलब निश्चय हुआ?

दादाश्री : जो नहीं बन पाता, उसका हमें निश्चय करना पड़े। हाँ, (ध्येय के लिए) निश्चय करें तब होगा। व्यवस्थित में है ऐसा करके बैठे रहने पर थोड़े काम होगा? व्यवस्थित का ऐसा मतलब नहीं निकालना है।

सब होता रहता है, पर ऐसा कह नहीं सकते कि सब होता रहता है। ऐसा कहने पर प्रयत्न को एक ओर किया कहलाये। यानी क्या होता है, उसे खुद देखा करे तो व्यवस्थित है। पर ऐसा भान ही नहीं है और फिर कहे कि सब चलता ही रहता है, ऐसा वैसा बोलने पर सब उलटा हो जाये। 'चंदुभाई क्या करते हैं' उसे आप देखा करना, उतना ही आपको करना चाहिए।

देखने से हटे सारी परतें

कुछ करना नहीं होता, क्या होता है, उसे देखना। भाव किये, (व्यवहार हेतु) निश्चय हुआ यह सब देखना। फिर निश्चय के अनुसार क्या हुआ उसे देखा करना। यह तो पूर्वभाव का जो डिज़ाइन है उसके अनुसार निकलता है, इसलिये हमें कुछ करने को नहीं रहता।

दादावाणी

प्रश्नकर्ता : हम ऐसा कह सकें कि भाव करने की हमारी सत्ता है?

दादाश्री : नहीं, वह भी खुद की सत्ता में नहीं है। यह तो पिछले अवतार का डिज़ाइन बोल रहा है, हमें कोई लेना-देना नहीं। उसे हमें देखा करना है। क्या हो रहा है, वही देखा करना।

प्रश्नकर्ता : जो परत आये उसे देखा करना, इतना ही?

दादाश्री : तो वह परत हटेगी, वर्ना यदि देखना नहीं हुआ 'मुझे ऐसा क्यों हुआ?' करने पर फिर बोझ बढ़ेगा और वह परत नहीं हटेगी।

प्रश्नकर्ता : उलटा-सीधा हो तो भी देखा करना?

दादाश्री : उलटा-सीधा होता ही नहीं है। बुद्धि उलटा दिखाती है। उलटी परत आने पर क्या करोगे? सीधा रहा तो भी देखा करना और उलटा होने पर भी देखा करना।

प्रश्नकर्ता : दोनों को देखा ही करना?

दादाश्री : दोनों में समानता रखना यही ज्ञान।

प्रश्नकर्ता : दोनों डिस्चार्ज ही है?

दादाश्री : दोनों डिस्चार्ज है, इसलिये हम जो कहते हैं वह प्रत्येक शब्द यदि समझ लें तो बात बन जाये।

प्रश्नकर्ता : अब यही लक्ष्य है कि दादाजी का विज्ञान समझना है।

दादाश्री : हाँ।

शक्ति पाना ज्ञानी के पास

प्रश्नकर्ता : आज्ञा पालन के लिए बहुत शक्ति चाहिए।

दादाश्री : हमारा ज्ञान रहा तो बहुत हो गया,

बस। उतना ही देखना। हमारा ज्ञान शुद्धात्मा के बहीखाते में अच्छी रकम जमा करे, पाँच आज्ञा का जितना ज्यादा पालन करे उतनी रकम ज्यादा जमा होती है। आप कम जमा करवाते हैं? ज़रा ज्यादा जमा करवाने में क्या हर्ज है? आज्ञा कुछ भारी या मुश्किल तो है नहीं।

प्रश्नकर्ता : आपके आशीर्वाद और शक्ति मिले तो कुछ भी मुश्किल नहीं है।

दादाश्री : हमारे आशीर्वाद और शक्ति मिलना निरंतर चालू ही होता है।

प्रश्नकर्ता : आज्ञा उतनी आसान नहीं है। आपकी शक्ति मिलने पर ही पालन हो सके ऐसा है।

दादाश्री : इसलिये ही हमारी शक्ति मिलना चालू ही रहता है। कोई यदि अपने आप नल बंद करे तो बंद हो जाये। बाकी, चालू ही रखा है। वर्ना आज के इस मोह के तुफान में मनुष्य कैसे जी पाता? मोह का कितना बड़ा तुफान!

प्रश्नकर्ता : इसमें आगे जा सकें तो फिर क्यों नहीं जायें?

दादाश्री : जा सकें ऐसा है, मार्ग कर दूँ। पुरुष होने के बाद जितना पुरुषार्थ करें उतना आपका।

प्रश्नकर्ता : पुरुषार्थ में ढीलापन नहीं रहे ऐसा बल भी आपको देना चाहिए, साथ-साथ।

दादाश्री : हम तो यह विधि में हर वक्त दिया करते हैं।

प्रश्नकर्ता : तो ऐसे आशीर्वाद दे दीजिये कि हो जाये।

दादाश्री : वही दिया है, पर आप दूसरा कुछ इधर-उधर करने जायें, तब वह (पुरुषार्थ) भी इधर-उधर होता रहे। सब को भी पूरा वही दिया है, इसलिये अब पाँच आज्ञा पर ज़रा अधिक जोर लगाने से कम्पलिट ठिकाने पर आ जायेगा। पाँच आज्ञा

पालन पर ज़रा अधिक ज़ोर दीजिये। यह फरॉटे के साथ पूरा कर लेना है कि नहीं? बाकी, शक्ति तो मैंने दे ही दी है। अब पाँच आज्ञा में रहिये ताकि शक्तियाँ प्रकट हों।

हमारी आज्ञा का यदि सही पालन नहीं होता हो, यदि उतनी कचाई रहती हो तो उसे पक्का करना। क्योंकि पुरुष हुए हो, पुरुषार्थ सहित हो और आज्ञा के बाद शेष कुछ नहीं रहता है।

केवल दादाजी की आज्ञा में रहना है, ऐसा जिसने निश्चय किया है, उसे इस दुनिया में कोई उलझन में डाले ऐसा नहीं है। फिर पालन हुआ तो ठीक है और पालन नहीं हुआ तो भी ठीक है, ऐसा भाव यदि पैदा हुआ तो सब बिगड़ा समझिये। ये आज्ञाएँ खुद ही आखिर मोक्ष तक पहुँचाये ऐसी है। आपको कोई गाड़ी चलानी नहीं पड़ती, वह गाड़ी ही ऐसी है (अपने आप चलनेवाली)।

प्रश्नकर्ता : और दूसरा यह तय करे कि अब इसमें उपयोग नहीं चुकना है तो...

दादाश्री : हाँ, निश्चय करे उससे बहुत काम होता है। 'हुआ तो ठीक है वरना कुछ नहीं' तो काम नहीं होनेवाला। और 'जो होना हो सो हो, करना ही है' ऐसा तय किया तो बारह आने जितना भी होगा।

प्रश्नकर्ता : निश्चय हो जाये और फिर अपने आप सब उसके अनुसार हो जाये, ऐसा?

दादाश्री : निश्चय करने पर सारी शक्तियाँ उस ओर मुड़ जाये। हम निश्चय करें कि नीचे जाना है यानी फिर सीढियाँ आदि सभी बातों में संभल-संभलकर जाये।

प्रश्नकर्ता : निश्चय तो है ही।

दादाश्री : निश्चय रहा तो कोई हर्ज नहीं। सभी का निश्चय है, फिर उसका सत्तर प्रतिशत पालन करता हो कि साठ प्रतिशत पालन करता हो तो भी हर्ज नहीं है। रोज पाँचबार निश्चय से बोलिये कि 'मुझे निश्चयपूर्वक

पाँच आज्ञा पालनी ही है, जो चाहे सो हो।' और फिर यदि पालन नहीं हो पाया तो हम बोनस में देते हैं। पर कोई ऐसा निश्चय करता ही नहीं।

प्रतिक्रमण से होवे शुद्ध, भरा हुआ माल!

प्रश्नकर्ता : सुबह उठकर मैं तय करूँ कि मुझे पाँच आज्ञा में ही रहना है, किसी को दुःख नहीं देना। फिर भी दिया जाता है, ऐसा क्यों?

दादाश्री : दुःख दिया जाये क्योंकि भीतर वह सारा माल भरा पड़ा है इसलिये। फिर अब हमने तय किया न कि नये सिरे से व्यापार शुद्ध करना है, इसलिये अब शुद्ध हो जायेगा।

प्रश्नकर्ता : कई बार हमने कैसा भी निश्चय किया हो, फिर भी बोला ही जाता है।

दादाश्री : नहीं बोलना हो तो भी बोल ही देते हैं। गोली छूट जाये, गोली अपने हाथ में नहीं है। दो-चार घंटों तक दबाकर रखें, फिर भी छूट जाये।

प्रश्नकर्ता : मैं मन में ऐसे निश्चय करूँ कि ऐसा नहीं करना चाहिए, फिर भी बोला जाता है।

दादाश्री : ऐसा नहीं चलेगा। उसका केवल उतना ही उपाय है कि हम उसका प्रतिक्रमण करें। दूसरा कोई उपाय नहीं है। उसे बंद नहीं करना है पर 'ऐसा नहीं हो तो अच्छा,' ऐसा हमें चंदुभाई से कहना होगा। फिर भी जो माल भरा है वह निकले बिना नहीं रहेगा। टंकी में कोलटार भरा होगा तो कोलटार निकलेगा और केरोसीन भरा होगा तो केरोसीन निकलेगा। जो भरा होगा वह निकलता रहेगा। पर यह अक्रम विज्ञान है, इसलिये खुद के कर्म खचाखच भरे हुए हैं। बिना निपटारे के बड़ी मात्रा में शेष बचे हैं और यह ज्ञान प्रकट हो गया है। परिणाम क्या आया कि खुद की चिंता आदि सब बंद हो गया पर निपटारा अकेला शेष रहा। निपटारा होता जाये त्याग त्याग आनंद बढ़ता जाये, चिंता बंद हो जाये, झंझट बंद हो जाये। आपको कोई झंझट-चिंता रहती है?

दादावाणी

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : इसलिये फाइलों का ज्यों-ज्यों निपटारा होता रहे, त्यों-त्यों बोझ कम होता जाये।

चौदह सालों में फाइलें खलास हो जायें, क्योंकि टंकी (डिस्चार्ज कर्मों की) भरी है पर दूसरा आवक (नये कर्म चार्ज होना) नहीं है। फिर वह टंकी खाली होती है और कुछ सालों में उसका हल निकल आता है। बहुत चिकना माल भरा है, इसलिये पाँच-सात साल अधिक लग सकते हैं पर खाली होता ही रहे।

प्रश्नकर्ता : चौदह सालों के पहले खाली नहीं होता?

दादाश्री : होता है न, वह तो जैसा जिसका पुरुषार्थ। तीन सालों में खाली करे। एक घंटे में खाली कर डाले ऐसे भी मनुष्य होते हैं। पर माल ऐसा चिकना लाये हो (कर्म इतने भारी) कि पुरुषार्थ आपका जाग्रत ही नहीं हो पाता।

बाधक है पिछले करार

प्रश्नकर्ता : आज्ञा कठिन नहीं है, पर पालन का प्रयत्न करते हुए कभी-कभी ऐसा लगता है कि आज्ञा में नहीं रहा जाता, ऐसा क्यों?

दादाश्री : नहीं रहा जाता, वह आपकी इच्छा है ही नहीं, नहीं रहा जाता यानी किसी का दखल है। अब मैं क्या कहता हूँ कि यह जगत में आपको दखल देनेवाला कोई है ही नहीं, पर आपने पहले जो हस्ताक्षर कर दिये हैं, उनकी असरों के कारण दखल है। ज्ञान होने से पहले हस्ताक्षर कर दिये थे कि नहीं?

प्रश्नकर्ता : हाँ जी।

दादाश्री : यानी आपके खुद के ही खड़े किये हुए दखल हैं। उन दखलों का अंत आना ही चाहिए।

आप सभी पुरुषार्थ हेतु तैयार ही हैं। मैं जानता

हूँ कि पुरुषार्थ कर सकें ऐसे हैं। फिर भी पुरुषार्थ नहीं होता उसका क्या कारण? पहले जो हस्ताक्षर किये थे, करार किये थे, वे करार पकने पर सुबह होते ही आकर खड़ा हो जाये। 'भैया, तू क्यों आया, अब मैं सुख में पड़ा हूँ तब?' उत्तर मिले, 'नहीं, जो हमारा हिसाब है उसे चुकता कीजिये, फिर सुख में पड़ना।'

मतलब करारी माल है। उसमें आपका शुद्ध उपयोग नहीं चला जाता। ज्यों-ज्यों उसका समभाव से निपटारा होता जाये, त्यों-त्यों संयम बढ़ता जाये। संयम को ही पुरुषार्थ कहा है और संयम ज्यों-ज्यों बढ़ता जाये त्यों-त्यों निपटारा जल्दी होता जाये। निपटारा तेजी से होता जाये वैसे संयम बढ़ता जाये। सब ऑटोमेटिक होते-होते केवलज्ञान पर आ जाये।

आपको कुछ नहीं करना है। सिर्फ दादाजी की आज्ञा का पालन करना है, उसमें भी पालन हुआ कि नहीं उसकी चिंता नहीं करनी। आज्ञा पालनी है ऐसा द्रढ निश्चय करके आप आज्ञा पालना। आप कहें कि दादाजी, मेरी सास मुझसे लड़ती है तो सास दिखाई देने से पहले आप मन में तय करें कि फाइल आई, अब दादाजी की आज्ञा अनुसार समभाव से निपटारा करना है, ऐसा तय करना और बाद में समभाव से निपटारा नहीं होता, उसके जिम्मेदार आप नहीं हैं। आप आज्ञा पालन के अधिकारी।

आप निश्चय के अधिकारी हैं उस कार्य के अधिकारी नहीं हैं। आप किसके अधिकारी हैं? आपका निश्चय होना चाहिए कि मुझे आज्ञा पालनी ही है, फिर नहीं पाल सके और एक थप्पड़ मार दिया तो उसके लिए आप खेद मत करना। थप्पड़ मार दिया तो फिर दूसरे दिन आकर मुझ से पूछ लेना कि अब क्या करूँ? तब मैं तुझे बताऊँगा कि प्रतिक्रमण करना। अतिक्रमण किया इसलिये प्रतिक्रमण करना। इतना सरल, सीधा, सुगम मार्ग ही समझ लेना है।

दखल देनेवालों से निपटारा करें

प्रश्नकर्ता : ऐसे तो बहुत से हिसाब चुकाने हैं इसलिये लम्बा चलता रहे।

दादाश्री : नहीं, लम्बा चले ऐसा नहीं है। उसका ऐसा नियम है। यह आम के पेड़ पर कितने आम लगे होते हैं? गिनने जायें तो अंत ही नहीं आयेगा पर अषाढ़ महीना आया कि पेड़ पर एक आम नहीं होगा। इसलिये आम को देखकर भड़कना मत कि कब उतारेंगे और कब गिने जायेंगे और कब खतम होंगे। गिनना नहीं कुछ। उसकी टाइमिंग होती है। इसलिये ऐसी बातों के लिये भड़कना मत।

जिस घड़ी करारवाला आये तब कहना, 'आइये महाशय, अब दादाजी मिले हैं, अब आपके सारे करार मुझे पूरे करने हैं। आपका पेमेन्ट ले जाइये। और आइये, चार ही क्यों आये हैं? रात बारह बजे तक पेमेन्ट करूँगा, मगर अब आकर ले जाइये।' बिना पेमेन्ट किये छुटकारा ही नहीं है। जो कार्य किये बगैर छुटकारा नहीं है। और जो दखल देनेवाला है ऐसे दखल देनेवालों का पहले निपटारा करना चाहिए।

जिस रास्ते हमारे (दादाजी के) दखल निकल गये हैं न, वही रास्ता मैं आपको बता रहा हूँ। हमने हमारे दखलों को निकलते देखा है। इसलिये मैं ने आपको यह रास्ता दिखाया है। असाढ़ महीने में पेड़ पर आम दिखाई नहीं देते न?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : क्यों बहुत सारी थी न? अभी बैशाख महीने तक दिखाई देती थी, फिर ऊपर नहीं रहती, वह तो काल समाप्त होने पर खड़ी नहीं रहती। उसे वेदना नहीं होती कि नीचे गिर पड़ूँगी, पर फिर भी खड़ी नहीं रहती। खानेवाले नहीं रहे तो चिडियाँ खा जायें, पर उसका अंत हो जाये। मतलब दखलों से घबराना नहीं। यदि पेमेन्ट चुकता करना पड़े तब उल्टे ऐसा कहना, 'आइये, जल्दी पेमेन्ट ले लीजिये,

आ जाइये।' हमने जो करार किया हो उसे पूरा तो करना पड़े न? तू कहे कि मुझ पर ऐसी गुजरती है, अब मेरी सास परेशान करती है। अरे! सास के साथ ऐसा करार है उसे पूरा कर। ये क्या सास परेशान करती है? यह तो करार ही किया हुआ है। जैसा करार किया हो वैसा करार तो हमें पूरा करना पड़े न!

प्रश्नकर्ता : हाँ जी।

आज्ञा में रहने का निश्चय मात्र

प्रश्नकर्ता : आपने जो पाँच आज्ञा बताई उसके अनुसार जीना, ऐसा नहीं?

दादाश्री : पाँच आज्ञा पालना, इससे आत्मा का रक्षण हो, यह ज्ञान का रक्षण हो। उसमें कठिनाई नहीं है न?

प्रश्नकर्ता : नहीं, कठिन तो है ही। आपने जो समभाव रखने को कहा, मतलब किसी के साथ गुस्सा नहीं करना, कुछ नहीं बोलना।

दादाश्री : नहीं, वह तो आप मन में तय कर लें कि 'मुझे समभाव से निपटारा करना है' उतना ही। आपको और कुछ नहीं देखना, हुआ कि नहीं हुआ यह नहीं देखना है।

प्रश्नकर्ता : जैसे बन पड़े वैसे, ऐसा क्या?

दादाश्री : उस झंझट में आपको नहीं पड़ना है। भगवान के यहाँ सत्य और असत्य दोनों होते ही नहीं। यह तो यहाँ की समाज व्यवस्था है। हिन्दुओं का सत्य, मुस्लिमों का असत्य हो जाये और मुसलमानों का सत्य हिन्दुओं का असत्य हो जाये। भगवान के यहाँ सही-गलत होता ही नहीं। भगवान तो इतना ही कहते हैं कि, किसी को दुःख पहुँचे तो प्रतिक्रमण करना। हम से किसी को दुःख नहीं पहुँचना चाहिए। आप 'चंदुभाई' थे, वह यहाँ दुनिया में सही, बाकी भगवान के यहाँ तो आप 'चंदुभाई' भी नहीं। यह सत्य भगवान के यहाँ असत्य है।

दादावाणी

संसार चलता रहे, संसार छूए नहीं, बाधारूप नहीं हो और बात बने ऐसा है। केवल हमारी आज्ञा का आराधन करना है। 'चंदुभाई' के झूठ बोलने से सामनेवाले का नुकसान हुआ, इसलिये हम 'चंदूभाई से' कहें कि प्रतिक्रमण कर लीजिये। झूठ बोलना प्राकृतिक गुण है, इसलिये बिना बोले नहीं रह पाते। झूठ बोलने के लिये मेरा प्रतिरोध नहीं है। मैं झूठ बोलने के बाद प्रतिक्रमण नहीं करने का प्रतिरोध करता हूँ। झूठ बोलें और प्रतिक्रमण के भाव हों, उस समय जो ध्यान बरतता है वह धर्मध्यान होता है। लोग धर्मध्यान क्या है इसकी खोज में हैं। झूठ बोला जाये तब 'दादाजी' के पास क्षमा माँगना और फिर से झूठ बोला ही नहीं जाये ऐसी शक्तियाँ माँगना।

प्रश्नकर्ता : मान लीजिये कि मूँह से बोला मतलब उसे मेरी ओर से तो दुःख पहुँचा ही कहलाये न?

दादाश्री : हाँ, वह दुःख तो हमारी इच्छा विरुद्ध हुआ है न, इसलिये हम प्रतिक्रमण कर लें। यही उसका हिसाब होगा, जो चुकता हो गया।

प्रश्नकर्ता : हमारे कुछ कहने पर उसे मन में तो बहुत बुरा लगे न?

दादाश्री : हाँ, खराब तो लगेगा ही। बुरा हुआ हो तो बुरा लगे न! हिसाब चुकता करना शेष हो, वह चुकता तो करना ही पड़ेगा। उसमें छुटकारा ही नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : अंकुश नहीं रहता, इसलिये वाणी द्वारा निकल जाता है।

दादाश्री : हाँ, निकल तो जायेगा ही पर निकल जाने के बाद उसका हम प्रतिक्रमण करें, बस और कुछ नहीं। पश्चाताप करके ऐसा फिर से नहीं करना है, ऐसा निश्चित करना चाहिए।

फिर फुरसत मिलने पर बार-बार उसके प्रतिक्रमण करते रहना ताकि सब नरम पड़ जाये। जो

जो फाइलें कठिन है उसे नरम करनी हैं। दो-चार फाइलें कठिन होती हैं, ज्यादा नहीं होती न?

वहाँ उपाय, आज्ञा में रहना

प्रश्नकर्ता : टकराव टालने की, 'समभाव से निपटारा' करने की हमारी वृत्ति होने पर भी सामनेवाला मनुष्य हमें परेशान करे, अपमान करे तो हम क्या करें?

दादाश्री : कुछ नहीं। वह हमारा हिसाब है, इसलिये हमें उसका 'समभाव से निपटारा' करना है ऐसा निश्चित रखना। हम अपने कायदे में ही रहें और हम अपने आप अपना पझल सोल्व किया करें।

प्रश्नकर्ता : यह टकराव जो होता है वह 'व्यवस्थित' के आधार पर ही होता होगा न?

दादाश्री : हाँ, टकराव जो है वह 'व्यवस्थित' के आधार पर सही मगर ऐसा कब कहा जाये? टकराव होने के बाद। 'हमें टकराव नहीं करना' ऐसा हमारा निश्चय हो। सामने खंभा नज़र आये तब हम जानें कि खंभा आ रहा है, घूमकर जाना होगा, टकराना तो है ही नहीं, पर ऐसा रखते हुए भी टकराव हो गया, तब हम कहें कि 'व्यवस्थित है'। पहले से ही 'व्यवस्थित है' मानकर चलें तो 'व्यवस्थित' का दुरुपयोग किया कहलाये।

निकाचित कर्म का जोरदार प्रतिक्रमण

प्रश्नकर्ता : 'समभाव से निपटारा करने का दृढ़ निश्चय होते हुए भी झगडा होता रहता है, ऐसा क्यों?'

दादाश्री : कितनी जगह पर ऐसा होता है? सौ जगह पर?

प्रश्नकर्ता : एक ही जगह पर होता है।

दादाश्री : तो वह निकाचित कर्म है। ऐसा निकाचित कर्म किससे धोया जाये? आलोचना, प्रतिक्रमण और प्रत्याख्यान से। उससे कर्म हलका हो

जाये। उसके बाद ज्ञाता-द्रष्टा रह पायें। ऐसे कर्म का तो निरंतर प्रतिक्रमण करना पड़े। जितने 'फॉर्स' से निकाचित हुआ हो, उतने ही 'फॉर्सवाले' प्रतिक्रमण से वह धुले।

चिकने कर्मों को कैसे खपाना?

प्रश्नकर्ता : आप से प्रश्न किया था कि, अनुभव होता है मगर आनंद नहीं होता। इस पर आपने बताया था कि चिकने कर्मों के कारण ऐसा होता है। तो उन चिकने कर्मों को शीघ्रता से कैसे खपाना?

दादाश्री : शुद्धात्मा में रहने पर शीघ्र खप जायें। यदि चिकने कर्मों को हम चिपके नहीं और उसे 'देखा' करें तो शीघ्र खप जायें।

प्रश्नकर्ता : ऐसी प्रक्रिया तो चालू ही है।

दादाश्री : बस, तो खतम हो जायेंगे, देर नहीं लगेगी। घर की फाइलों के साथ चिकने कर्म लाये होते हैं, बाहरवाली फाइलों के साथ ढीले होते हैं। घर की फाइल के साथ चिकने कर्म होने का अनुभव तो हुआ होगा न?

अभी ट्रेन में किसी से पहचान हुई और किसी ने चाय पिलाई तो समझना कि वे सभी ढीली फाइलें हैं। मगर इन चिकनी फाइलों का निपटारा बहुत कठिन है। आप समभाव से निपटारा करें तो भी बार-बार चिकनाहट निकलती रहे। 'समभाव से निपटारा करना ही है' उतना ही आपको बोलना है, अपने आप हो जायेगा। क्योंकि लम्बे अरसे से ये फाइलें चिपकी हुई हैं और बहुत लम्बा हिसाब जम गया है।

मान लीजिये, एक चिकनी फाइल मिलने आ रही है और उसका समभाव से निपटारा करना है तो क्या करना? तो उसके आने से पहले ही हमें उसका शुद्धात्मा देख लेना चाहिए। हमने रिलेटिव और रियल देख लिया, फिर उसका समभाव से निपटारा करना तय किया हो, इसलिये समभाव से निपटारा हो

जायेगा। सामनेवाली फाइल टेढ़ी रही तो निपटारा नहीं होता, पर आपको वह नहीं देखना है (आप उसकी चिंता न करें)। आपका तो निश्चय है कि समभाव से निपटारा करना है, फिर जो होता है उसे देखा करना।

प्रश्नकर्ता : हम कहते हैं कि कुछ फाइलें चिकनी हैं, मगर चिकनाहट किसकी? उसे चिकनी कौन करता है?

दादाश्री : करनेवाला ही तो आज भुगत रहा है। चिकनी की थी इसलिये तो आज करनेवाले को भुगतनी पड़ती है।

प्रश्नकर्ता : फिर वह चिकनाहट दूर कैसे करना?

दादाश्री : वीतरागता से। चिकनाहट तो पिघलती रहे निरंतर, पर हम चिकनाहट करें तो फिर खड़ी हो जाये। हम वीतरागता दिखायें तो छूटती रहे। यानी हमें समभाव से निपटारा करना है वह वीतरागता का ही हिस्सा है।

प्रश्नकर्ता : यदि हम से अधिक चिकना हो गया, तो फिर उसका प्रतिक्रमण करना होगा न?

दादाश्री : हाँ, जरूरत पड़ने पर प्रतिक्रमण करना। वह भी 'हमें' नहीं करना है, चंदुभाई से ऐसा कहना, 'भैया, प्रतिक्रमण कीजिये।' अतिक्रमण 'हम' कहाँ करते हैं? अतिक्रमण चंदुभाई ने किया, इसलिये चंदुभाई से कहना, प्रतिक्रमण कीजिये।

प्रश्नकर्ता : संसार का सबसे बड़ा कार्य समभाव से निपटारा कीजिये।

दादाश्री : हाँ, फाइलों का ही झंझट है सारा! इन फाइलों के कारण ही आप अटके पड़े हैं। इन फाइलों ने ही रास्ता रोक रखा है, दूसरा कोई रोकनेवाला नहीं है। और बाकी सब जगह आप वीतराग हैं।

समभाव का भाव मत तोड़ना

प्रश्नकर्ता : अब वह फाइल मोक्षमार्ग में

दादावाणी

रूकावट करती हो और हमसे समभाव से निपटारा नहीं हो पाता तो उस फाइल को लाल कपड़े में बाँधकर परछत्ती पर रख दें और कहें कि, 'मैं जब सावधान होऊँगा तब देखूँ गा, पर अभी तू यहाँ से जा।' ऐसा करें तो चलेगा कि नहीं चलेगा?

दादाश्री : ऐसा कुछ नहीं करना है। 'समभाव से निपटारा करना है' ऐसी आपको भावना रखनी है, और कुछ नहीं। ताकि सामनेवाले मनुष्य के लिए हमारा भाव नहीं बिगड़े। हुआ या नहीं हुआ उससे आपका क्या लेना-देना? आसान छोड़कर कठिन क्यों करते हैं? मतलब यह सरल है ऐसा, आसान है। सरल इसलिये कि आपको आज्ञा पालनी ही है। आपको और कुछ (हुआ या नहीं हुआ) नहीं देखना है। मनुष्य से दुसरा कुछ नहीं हो पाये। यदि समभाव से निपटारा नहीं हो पाता तो तब वहाँ क्या करना? सिर पटकना? नारियल फोड़ते हैं वैसे कुछ सिर थोड़े ही फोड़ा जाये? जो हुआ सो सही, करेक्ट। मगर आपका भाव एक्झेक्ट होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : कभी-कभी हम आपसे ऐसा माँगते हैं कि दादाजी, इन फाइलों का निपटारा करने की हमें आप शक्ति दीजिये, यह ठीक है?

दादाश्री : हाँ, ऐसी माँग भी करना, पर माँग करने के बाद फिर अपने कार्य में लगे रहना। माँग नहीं छोड़ना। फाइल जोरदार रही, तो माँग तो हमें करनी ही पड़ेगी पर माँग करके इन्तजार मत करना। इन्तजार करना गुनाह है।

प्रश्नकर्ता : दादाजी, ऐसा है कि सामनेवाले के मन का समाधान नहीं होता तब वह विचलित हो जाते हैं?

दादाश्री : ऐसा कुछ नहीं है, उसका विचलित होना आदि सब कर्म के अधीन है। समाधान होने के बाद भी चिल्लाये। हमें तय क्या करना है कि प्रत्येक फाइल का समाधान करना है। चाहे कुछ भी हो जाये, सामने कोई भी हो पर समाधान ही करना है ऐसा

निश्चय रहना चाहिए। हुआ या नहीं हुआ यह मत देखना। वह तो किस कर्म के उदय अधीन, क्या हो यह तेरी समझ में नहीं आयेगा। पर आपने कोई भी गुनाह नहीं करना तय हुआ तब से ही आप बेगुनाह साबित हुए। फाइल चाहे कैसी भी बुरी हो या अच्छी हो, गुनाह मेरा हो या उसका हो, यह मुझे नहीं देखना है। फाइलों का समभाव से निपटारा करना इतना ही अपना धर्म।

हमने निश्चय किया है, इसलिये फिर कोई हर्ज ही नहीं है। हम कितने जिम्मेवार हैं? यह हमने तय नहीं किया है उतने हम जिम्मेवार हैं। लोग तो उलटे के साथ उलटा और सुलटे के साथ सुलटा, उलटा-सुलटा किया करें, पर हमें तो उलटे के साथ भी सुलटा और सुलटे के साथ भी सुलटा रहना है, सभी के साथ सुलटा रहना है। क्योंकि हम दूसरे गाँव के प्रवासी हैं, इस गाँव के प्रवासी नहीं हैं। हम मोक्षमार्ग के प्रवासी हैं, संसारमार्ग के प्रवासी नहीं हैं। यदि संसारमार्ग के प्रवासी होते तो बुरा छोड़ना और अच्छा करना होता है फिर।

प्रश्नकर्ता : दादाजी, ऐसा होते हुए भी कभी एकदम से बम फट जाता है।

दादाश्री : वह तो फट जाये, कोई हर्ज नहीं। उसमें घबराने जैसा नहीं है। फट जाये उसे भी देखना कि 'अहह! चंदुभाई आपकी तो क्या बात है?' चंदुभाई के साथ जरा सिर खपाना पर फिर ज्यादा लड़ना नहीं।

हमारा निश्चय नहीं टूटना चाहिए। 'यह (चंदुभाई) ऐसा है और इसकी ही भूल, यह तेरी गलती है और इसमें मेरा क्या कसूर?' ऐसा सब नहीं होना चाहिए। भूल हमारी ही। किसकी भूल है, यह सवाल नहीं उठाना। समभाव से निपटारा करना।

परिणाम मत देखो, आज्ञा पालते रहो

प्रश्नकर्ता : हमें ऐसा लगे कि इस तरीके से

दादावाणी

सामनेवाले का समाधान हो, तो हम से समभाव से निपटारा हो गया कहलाये। मगर ऐसा उदय में नहीं आता, ऐसा क्यों?

दादाश्री : समाधान हो पाया कि नहीं हो पाया, यह हमें नहीं देखना है। ऐसा करने को मैं ने आपको नहीं कहा है। मैं ने तो आपको आज्ञा दी है कि समभाव से निपटारा करना। मेरी आज्ञा पालने के बाद निपटारा हुआ कि नहीं हुआ, इसकी मुझे परवा नहीं है। समभाव से निपटारा करने जाने पर उलटे वह जूता लेकर मारने दौड़े, ऐसा भी हो सकता है, वह तो उसकी प्रकृति पर आधारित है। ऐसी हमारी आज्ञा नहीं है। हमारी आज्ञा तो समभाव से निपटारा करना है ऐसा आपका डिसीज़न होना चाहिए। डिसीज़न में बदलाव नहीं आना चाहिए।

समाधान हो पाया कि नहीं हो पाया यह हमें नहीं देखना है। हम दादाजी की आज्ञा में रहे कि नहीं रहे? बाद में कैसे समाधान किया जाये, इसकी खोजबीन करना चाहो तो उसमें हर्ज नहीं है। मगर उसी क्षण तो समाधान नहीं भी हो पाये, वह तो सामनेवाले की प्रकृति के अधीन है।

प्रश्नकर्ता : यदि सामनेवाले का समाधान नहीं होता है तो सब शंका में पड़ जायें कि हम समभाव में हैं या नहीं?

दादाश्री : नहीं, समभाव में हैं या नहीं, यह देखने की ज़रूरत नहीं है। दादाजी की आज्ञा पालना है ऐसा हमारा निश्चय है कि नहीं? शंका रखने की हमें क्या ज़रूरत है? हमने दादाजी की आज्ञा का पालन किया है।

मैं ने आप से कहा कि यहाँ से वहाँ जगह तक जाइये, मगर पीछे मुड़कर मत देखना। इस पर आपने तय किया हो कि पीछे मुड़कर नहीं देखना है, फिर भी आँख ने देख लिया तो उसमें हर्ज नहीं है। आपका निश्चय चाहिए, फिर दो बार देख लिया तो उसमें

हरकत नहीं है। आपका निश्चय नहीं छूटना चाहिए। देख लिया उस समय शंका नहीं होनी चाहिए कि देख लिया, अब दादाजी क्या कहेंगे? ऐसा नहीं होना चाहिए। दादाजी की आज्ञा मुझे पालनी ही है। प्रकृति तो देख लेगी, सबकुछ देख लेगी। आपके लिये तो दादाजी की आज्ञा पालनी है ऐसा निश्चय करना, यही सबसे बड़ी बात है।

प्रश्नकर्ता : प्रतिदिन सबेरे जागने पर निश्चय करता हूँ कि दादाजी की आज्ञा में ही रहना है, फिर प्रकृति उसके अनुसार होने देती है या नहीं भी होने देती है।

दादाश्री : नहीं होने देगी, इसका मतलब हमें ऐसा नहीं मानना है कि प्रकृति ऐसा नहीं होने देती है, इसलिये क्या हमें ढीला छोड़ना? प्रकृति से कहें, 'तू जो करना चाहे कर।' हम उतने ही स्ट्रोंग रहें।

प्रश्नकर्ता : फिर मन में प्रश्न उठता है कि हमने निश्चय तो किया है, फिर भी आज्ञा में नहीं रह पाते तो इसमें दादाजी की अवज्ञा तो नहीं होती है न?

दादाश्री : नहीं। उसमें अवज्ञा नहीं करते पर साथ-साथ देखते रहना कि प्रकृति आपको फँसा तो नहीं रही है न! प्रकृति तो गुदगुदी करेगी ही, प्रकृति तो क्या नहीं करती? वह निश्चयन चेतन है, ऐसी वैसी चीज़ नहीं है। हमें तो आज्ञा पालनी है ऐसा निश्चय रखना है।

कला नहीं, निश्चय ज़रूरी है

हमें जीवन जीने की कला जाननी पड़ेगी।

प्रश्नकर्ता : दादाजी, फिर तो समभाव से निपटारा करने हेतु कुछ कला की भी ज़रूरत होती है, ऐसा हुआ न?

दादाश्री : ऐसी कला नहीं आती होगी तब भी, ऐसा बोलने पर कला आ जायेगी। इतना बोले न कि,

‘दादाजी की आज्ञा पालनी है’, फिर कला नहीं आती होगी तो भी आज्ञा पालते हैं इसलिये आ जायेगी।

प्रश्नकर्ता : मगर ऐसे कला के साथ एडजस्टमेंट करना नहीं आया तो पूर्णरूप से निपटारा नहीं होगा न?

दादाश्री : ऐसे काल में ऐसी कला कहाँ से होगी? जीना ही नहीं आता तो कला कैसे आयेगी? ये सभी स्त्रियाँ मुझ से आकर कहे कि, ‘इन मर्दों की परीक्षा लेकर देखिये।’ तब लाखों में से दो-तीन पास होंगे, मेरे निष्पक्षपात रूप से परीक्षा लेने पर! पति होते हुए क्लेश क्यों होता है? मतभेद क्यों होता है? मतभेद होता है मतलब तुझे पति होना नहीं आता।

यह जो समभाव से निपटारा करने को कहा, इसका इतना ही अर्थ है कि, जिसने शादी की है, उनको हल तो निकालना ही होगा। उससे छुटकारा मिल गया (सभी रूप से समाधान रहा) तो उसके समान उत्तम दूसरा कुछ नहीं है। कभी न कभी छुटकारा तो पाना ही होगा न? वहाँ तक नौवाँ गुणस्थान (संपूर्ण ब्रह्मचर्य का) पार होगा ही नहीं। नौवाँ गुणस्थान पार नहीं होता, तब तक मोक्षमार्ग में प्रगति करना संभव ही नहीं है।

‘समभाव से निपटारा’ तय होने पर सुलझाव

यह ‘समभाव से फाइलों का निपटारा’ तो अक्रम की एक अजायब वस्तु है। हमारी आज्ञा पालने का आप निश्चय करें कि ‘फाइलों का समभाव से निपटारा’ करना ही है, तो ऐसा आपको हाज़र हो जायेगा। हमारा अपना निश्चय होना चाहिए कि निपटारा करना है। ये शब्द ही ज्ञान स्वरूप है। फिर बाहरी सब ‘व्यवस्थित’ के अधीन है। आपकी भावना दृढ़ होनी चाहिए कि आज्ञा पालनी ही है।

‘समभाव से निपटारा’ करना मतलब संयोगों के अनुसार काम लेना। समता में ऐसा नहीं होता। (समता, समभाव से निपटारा से आगे की स्थिति है।)

जो हमें पसंद नहीं आता हो ऐसा मनुष्य आने पर अंदर मन-बुद्धि-चित्त-अहंकार सभी उछल-कूद करने लगे। ऐसे समय पर हम कहें कि समभाव से निपटारा करना है, कि सब चूप हो जायेंगे। समभाव से निपटारा करने का तय होते ही सामनेवाले मनुष्य पर उसका असर होता है और वह भी ठंडा पड़ जाता है। किसी समय बहुत चिकना हिसाब रहा तो ठंडा नहीं भी होता। तब उस ओर हमें नहीं देखना है, हमें तो दृढ़ निश्चय करना है कि समभाव से निपटारा करना ही है। आज नहीं तो कल वह नरम हुए बिना रहेगा ही नहीं। सब ‘व्यवस्थित’ के अनुसार ही होता है।

ज्ञानी करे सब का समभाव से निपटारा

एक वाक्य ऐसा बोलिये कि जिसमें सारी फाइलों का समावेश हो जाये, कोई फाइल बाकी नहीं रहे। यदि एक वाक्य में कहना चाहें तो जिन जिन का हमें संयोग होता है वे सारी फाइलें। संयोग शब्द में सारी फाइलें समा जायें कि नहीं समा जायें, यदि हम गणना करें तो ?

जितने संयोग उतनी सारी फाइलें, फिर वह चाहे मनुष्य रूप में हो कि अन्य रूप में हो या किसी भी रूप में हो। जितने संयोग उतनी फाइलें और संयोग सारे वियोगी स्वभाव के हैं। इसलिये समभाव से निपटारा करना। ये तीन लोग आये, तो उनका समभाव से निपटारा कर दिया, है कोई शोरगूल? हमारे पास प्रतिदिन दस-पंद्रह फाइलें आती होंगी कि नहीं?

प्रश्नकर्ता : बहुत सारी।

दादाश्री : उन सभी का निपटारा करता हूँ, समभाव से निपटारा करता हूँ। कोई टेढ़े स्वभाव का हो, कोई अलग स्वभाव का हो, समभाव से निपटारा तो करना चाहिए न?

यह लक्ष्य ही रहता है कि यह शुद्धात्मा है और इस समय मेरे लिये फाइल के रूप में हैं। फाइल के साथ कैसे पेश आना, इसकी समझ मुझे रखनी है।

हमारी दो दृष्टियाँ होती हैं, निश्चय से तो निर्दोष है, व्यवहार से भी निर्दोष है और फिर इस फाइल का समभाव से निपटारा करना है। अब किसी जगह मेरे नाम पर कोई क्लेम दर्ज नहीं होता। यानी कोई संयोग बाधक नहीं हो ऐसा विज्ञान दिया है। यह संयोग स्वरूप भी कहाँ तक की कोई अपना बेग उठाकर चलता बने तो व्यवहार से किच-किच करें मगर अंदर में कुछ असर नहीं होना चाहिए। सारे संयोग ही हैं और ऐसा हमेशा के लिये नहीं होता।

संयोग वियोगी स्वभाव के ही हैं। कोई भी संयोग आपसे आ मिलेगा वह वियोगी स्वभाव का है, इसलिये आपको उसे हटाना नहीं पड़ेगा। ऐसा नहीं होता तो कोई वीतराग नहीं हो पाता।

समभाव से निपटारे के भाव में चौकस

प्रश्नकर्ता : सामनेवाले का समाधान हुआ कैसे कहलाये? सामनेवाले का समाधान हो पर उसमें उसका अहित समाया हुआ हो तो?

दादाश्री : यह आपको देखना नहीं है। सामनेवाले का अहित तो सामनेवाले को देखना है। आप सामनेवाले का हिताहित देखें ऐसी आपकी शक्ति है क्या? आप अपना ही हित देख नहीं सकते, तो फिर दूसरों का हित क्यों देखने जाते हैं? सब अपनी-अपनी बिसात के अनुसार हित देखते हैं, उतना हित देखना चाहिए। मगर सामनेवाले के हित के लिए टकराव पैदा हो ऐसा नहीं होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : सामनेवाले का समाधान करने का हम प्रयत्न करें पर उसका परिणाम अलग आनेवाला है, ऐसा मालूम होने पर क्या करना होगा?

दादाश्री : परिणाम जो भी आये, हमें तो 'सामनेवाले का समाधान करना है' इतना तय रखना। 'समभाव से निपटारा' करने का तय कीजिये, फिर निपटारा होगा कि नहीं होगा यह आगे से मत देखना। निपटारा होगा ही, आज नहीं तो कल होगा या फिर

तीसरे दिन होगा। चिकना रहा तो, दो साल, तीन साल या पाँच साल भी लग जायेंगे मगर होगा अवश्य। 'वाइफ' के साथ ऋणानुबंध बहुत चिकने होते हैं, संतानों के चिकने होते हैं, माँ-बाप के चिकने होते हैं, वहाँ ज़रा ज्यादा समय लगता है। घर के सभी अपने साथ-साथ होते हैं, वहाँ निपटारा धीरे-धीरे होता है। पर हमने तय किया है कि 'हमें समभाव से निपटारा करना है', इसलिये एक दिन ऐसा निपटारा होकर ही रहेगा, उसका अंत आयेगा। जहाँ चिकने ऋणानुबंध हों, वहाँ जागृति बहुत रखनी पड़े। साँप कितना भी छोटा क्यों नहीं हो, वहाँ हमेशा सावधानी ही बरतनी पड़ती है। गाफिल रहें, अजागृत रहें तो समाधान नहीं होनेवाला। सामनेवाला व्यक्ति कुछ बोल जाये और हम भी बोल दें, बोलने में हर्ज नहीं है क्योंकि बोलने के पीछे हमें समभाव से निपटारा करना है, ऐसा भाव रहा है इसलिये द्वेष नहीं रहता। बोल देना वह पुद्गल का है और द्वेष रहने के पीछे खुद का समर्थन रहता है। इसलिये हम तो 'समभाव से निपटारा' करना है ऐसा तय करके काम किया करें, हिसाब चुकता हो ही जायेगा। माँगनेवाले को यदि आज नहीं दे पाये तो कल दिया जायेगा, होली के दिन दिया जायेगा, नहीं तो दिवाली के दिन दिया जायेगा, माँगनेवाला मगर लेकर ही जायेगा।

निश्चय करने से सायन्टिफिक असर

प्रश्नकर्ता : 'समभाव से निपटारा' करने में कोई क्रिया है?

दादाश्री : कोई क्रिया नहीं है। मन में तय करना कि मुझे दादाजी की आज्ञा पालनी है, समभाव से निपटारा करना है, बस उतना ही। फिर कोई क्रिया नहीं करनी है। समभाव से निपटारा करना है यही आपका भाव होना चाहिए, फिर क्या हुआ वह अलग वस्तु है। पर उसका सायन्टिफिक असर होता है। यदि आप इस प्रकार अंदर तय करें तो उसका सामने के मनुष्य पर असर पड़ता है और सायन्टिफिक तौर पर

दादावाणी

हेल्प होती है। और यदि आप अंदर तय करें अंदर में कि मुझे आज उस आदमी को सीधा कर देना है तो भी उसका असर उस आदमी पर पड़ेगा। मतलब यह बहुत ही सुंदर से सुंदर हथियार दिया है, समभाव से निपटारा कीजिये।

पुरुष (आत्म स्वरूप प्राप्ति के बाद) होने के बाद पुरुषार्थ की ही जरूरत है। फाइल का तो अपने आप निपटारा हो ही जायेगा। आपको कुछ करने की जरूरत नहीं है। हमारे मन में पहले जो रहता था कि यह आदमी अपने मन में क्या समझता है? ऐसे उलटे भाव होते थे, वे अब नहीं होने चाहिए। वह आपके साथ कुछ भी करे, सामने का मनुष्य उछल-कूद करता हो तो हमें उसमें कोई हर्ज नहीं। उसका हमें समभाव से निपटारा करना है ऐसा तय करना, फिर वैसा ही होता रहे।

समभाव छुड़ाये फाइल का भार

प्रश्नकर्ता : दादाजी, यह ज्ञान आपने दिया, अब नहीं बोलने की कला और सब में हम शुद्धात्मा देखें और अंदर उसे नमस्कार करें यानी चिकनी फाइल से निपटारा हो जाये न?

दादाश्री : फाइल यानी विचार आये बगैर रहे नहीं, बिन बोले रहा नहीं जाये। नहीं बोलने की कला वहाँ नहीं चलती।

प्रश्नकर्ता : पर उसकी रीति तो होगी न, दादाजी?

दादाश्री : वह तो हम नियम बना लें कि बोलना नहीं है। फिर भी बोला जाये, यही फाइल की निशानी। जितनी फाइल चिकनी होगी उतना बोला जाये। वर्ना हमारी धारणा के अनुसार नहीं बोलना हो तो नहीं भी बोलें। और वह जो चिकनी फाइल है उसके साथ नहीं बोलना हो तो भी बोल देंगे। मगर नहीं बोलना है ऐसा तय रखना चाहिए। उसके बारे में हमें बोलना नहीं है, सोचना नहीं है कि बरतना नहीं

है ऐसा अपने मन में तय कर के फिर उस फाइल का निपटारा करना। (इसे) फाइल कही, ये सारी फाइलें कहलाये। 'फाइल मुझे ऐसे बाधक होती है' ऐसा नहीं बोल सकते। फाइल का तो अपने आप निपटारा हो ही जाये। बाधक क्या है? जागृति कच्ची रही है वह बाधक है। फाइल का तो निपटारा हो जाये। जो फाइल आई है, उसका निपटारा छह महिने-बारह महिने में हो जाये। उस पर अधिक ध्यान नहीं देना। निपटारा करना है ऐसा तय रखना ताकि जब आ मिले तब निपटारा करना है यह निश्चय हाजिर रहे।

प्रश्नकर्ता : यानी जागृति पूर्ण होने पर फाइल किसी प्रकार बाधक नहीं होती और यह जो बाधा है वह जागृति की कच्चाई है अभी।

दादाश्री : हमें निपटारा करना है और उसे निपटारा नहीं करना है, तो भी हम कहें कि 'आ जाओ' हमें समभाव से निपटारा करना ही है। तब हमारी जीत होगी, वे जीतनेवाले नहीं हैं। क्योंकि वे पौद्गलिक कायदे से बाहर हैं। यह तो पौद्गलिक कायदे के अंदर है। वे कहेंगे, 'मैं मोक्ष में नहीं जाने दूँगा।' हम कहें, 'मुझे जाना है।' तो हम जायेंगे और वे थोड़े समय के लिये हराकर, थकाकर फिर भाग जायेंगे। कमठ के रूप में दस अवतार तक पार्श्वनाथ भगवान का भाई उसे परेशान करता रहा पर अंत में उसे भागना पड़ा, भगवान नहीं भागे।

अड़े रहिये निश्चय पर

प्रश्नकर्ता : कई बार समभाव से निपटारा करना चूक जाते हैं।

दादाश्री : चूक नहीं जायें तब सही कहलाये।

प्रश्नकर्ता : मुझे रंज रहा करता है कि दादाजी का ज्ञान मिलने के बाद समभाव से निपटारा क्यों नहीं कर सकता हूँ?

दादाश्री : तुझे समभाव से निपटारा करना है ऐसा तेरा निश्चय चाहिए और नहीं रह पाये इसके लिए

हम तुझे लेट गो करते हैं। फाइलों से निपटते समय वह निश्चय भूल जाये ऐसी अजागृति नहीं होनी चाहिए। वहाँ पुरुषार्थ धर्म चाहिए, भूल नहीं जाना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : नहीं, मैं ऐसा कहना चाहता हूँ कि मैं निश्चय करूँ और लगातार भाव में रखूँ कि मुझे इस फाइल का समभाव से निपटारा कर डालना है तो वह सही कहलाये?

दादाश्री : निश्चय सही है पर धीरे-धीरे आगे चलकर फिर निश्चय अनुसार बरतता है कि नहीं यह भी देखना चाहिए न?

प्रश्नकर्ता : वह तो मैं देखूँगा, उसमें कोई प्रॉब्लेम नहीं है।

दादाश्री : तो हर्ज नहीं, तो करेक्ट।

निश्चय स्वाधीन है, व्यवहार पराधीन है और परिणाम तो पराधीन का भी पराधीन है। व्यवहार में तो हम हैं, यह सब है पर परिणाम का क्या करना? व्यवहार पराधीन है। व्यवहार को लेकर कोई माथापच्ची मत करना। हमें निश्चय करना है कि दादाजी की आज्ञा पालनी है, फिर व्यवहार में पाली गई या नहीं पाली गई वह व्यवहार के अधीन। आपके मन में पोल नहीं होनी चाहिए कि, चलता है, थोड़ी ढील दे दीजिये न। ढील देने की आपको ज़रूरत ही नहीं है।

आप निश्चय करें कि मुझे पाँच आज्ञा पालनी ही है। नहीं पाली जाये उसका बोझ लिए मत फिरना। मुझे क्या मालूम नहीं है? मैं भी जानता हूँ कि व्यवहार पराधीन है। मगर जानबूझकर दुरूपयोग मत करना। भीतर ऐसा मत रखना कि नहीं पाली गई तो क्या हो गया? पाली गई तो ठीक है, ऐसा भी नहीं रखना।

आज्ञा पाली, हम किसे कहते हैं कि जितनी पाल सके उतनी आसानी से पालिये। नहीं पाली जाये उसके लिए मन में जागृति रखिये कि ऐसा नहीं होना चाहिए। बस, मतलब वह पालने के बराबर है।

चलना ध्येय अनुसार, मन अनुसार नहीं

प्रश्नकर्ता : निश्चय किया हो कि दादाजी के पास रहकर काम निकाल लेना है। पाँच आज्ञा में रहना है और फिर भी उसमें कच्चे पड़ जायें, उसके लिए क्या करना चाहिए?

दादाश्री : लीजिये, क्या करना चाहिए यानी? मन कहे कि 'ऐसा करो' तो हम समझे कि यह हमारे ध्येय से बाहर है। और दादाजी की कृपा कम हो जायेगी। इसलिये मन से कहना कि, 'नहीं, यह ध्येय के अनुसार ऐसे होना चाहिए।' दादाजी की कृपा कैसे उतरती है यह जानने के बाद हमारा आयोजन होना चाहिए।

मतलब मन के कहे अनुसार चलने पर यह सारी झंझट होती है। इसके बारे में कई बार कहा है। यही समझाता आया हूँ बार-बार, इसलिये फिर मन के कहे अनुसार नहीं चलना चाहिए, हमारे ध्येय अनुसार ही चलना चाहिए। वर्ना मन तो, किस गाँव जाना हो और किस गाँव ले जायेगा। ध्येय अनुसार चलना इसीका नाम पुरुषार्थ। मन के कहे अनुसार तो ये अंग्रेज-बंग्रेज सभी चलते ही हैं न? ये सभी फ़ौरनर्स का मन कैसा होता है? सीधा होता है और हमारा मन दखलवाला होता है। कुछ न कुछ उलटा-सीधा होता ही है, इसलिये हमें तो अपने मन का स्वामी होना चाहिए। हमारा मन, हमारे कहे अनुसार चले ऐसा होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : यह बात निकलने पर पंद्रह-बीस दिन उसके अनुसार चलता रहे। फिर कुछ ऐसी बात हो जाये कि जैसे थे वैसा हो जाता है, ऐसा क्यों?

दादाश्री : जैसे थे वैसा जाये पर वह तो मन हो जाता है न, हम क्यों हो जायें? हम तो वही के वही है न?

आज्ञा के लिए निश्चय ही चाहिए

आज्ञा पालन नहीं हो पाये इसमें हर्ज नहीं है

दादावाणी

पर नहीं पालनी है ऐसा मन में नहीं होना चाहिए। पालने का निश्चय होना चाहिए कि बस, मुझे पालनी ही है। फिर पालन नहीं हो पाता इसका गुनाह दर्ज नहीं होता। आपने पालन करने का तय किया है, इसलिये मैं जिम्मेदार हूँ। फिर पालन नहीं हो पाया उसकी जिम्मेदारी भी हमारे सिर आती है। आपने तय किया और पालन नहीं हो सका, उसमें कौन गुनहगार?

आपको केवल 'पाँच आज्ञा पालनी है' ऐसा निश्चय रखना है, वह दृढ़ता आपकी एक दिन के लिये भी टूटनी नहीं चाहिए। और इसका (आज्ञा का) प्रतिपक्षी होना है, ऐसा नहीं होना चाहिए।

निश्चय-व्यवहार समाये पाँच आज्ञा में

प्रश्नकर्ता : कल सत्संग में सुना कि पाँच आज्ञा में से तीन व्यवहार की है और दो निश्चय की ही, यह जरा समझाइये।

दादाश्री : रियल में शुद्धात्मा देखना और रिलेटिव उसका पेकिंग देखना ये दोनों निश्चय स्वरूप है और शेष तीनों व्यावहारिक हैं। ये तीन व्यवहार और दो निश्चय। हमारा यह सारा मार्ग व्यवहार-निश्चय का है। निश्चय से शुद्धात्मा है और व्यवहार दृष्टि से पेकिंग (शरीर) दिखाई दे। इसलिये पहली दोनों निश्चय में जाती है और अन्य तीन व्यवहार के लिए है। ऐसे व्यवहार-निश्चय की समतुला रखती हैं। ये पाँच आज्ञा आखिर मोक्ष में ले जाने तक काम किया करे और सरल-सीधी, नहीं टेढ़ी, नहीं मेढ़ी। कुछ छोड़ने-करने को नहीं कहा है।

पाँच आज्ञा में संपूर्ण व्यवहार धर्म

जहाँ शुद्ध व्यवहार नहीं है, जहाँ व्यवहार का फाउन्डेशन ही नहीं है, वहाँ निश्चय जैसी कोई वस्तु ही नहीं है। और बिना व्यवहार शुद्धि के निश्चय कभी काम ही नहीं करता।

शुद्ध व्यवहार के बेझमेन्ट पर शुद्ध निश्चय खड़ा है। शुद्ध व्यवहार का बेझमेन्ट जितना कच्चा होगा उतना

निश्चय नहीं पायेंगे। क्योंकि निश्चय का नियम ऐसा है कि शुद्ध व्यवहार होने पर ही निश्चय शुद्ध होता है। हमारे यहाँ तो 'फूल' (पूर्ण) व्यवहार के साथ का धर्म है। 'पूर्ण' निश्चय और 'पूर्ण' व्यवहार। हमने जो पाँच आज्ञाएँ दी हैं न, वह संपूर्ण व्यवहार धर्म है।

मतलब हम क्या कहना चाहते हैं कि हमारा यह अक्रम विज्ञान जो है, वह शुद्ध व्यवहार और शुद्ध निश्चय का मार्ग है। हमने जो आज्ञाएँ दी हैं, उन आज्ञाओं के अधीन आपका शुद्ध व्यवहार है। फिर आज्ञा नहीं पाले, कम पालें यह अलग बात है। मगर आज्ञाधीन व्यवहार वह शुद्ध व्यवहार है।

पाँच आज्ञा सारे धर्मों का दोहन

अब वह शुद्ध उपयोग तो हमारी आज्ञा में आ जाता है कि नहीं आ जाता?

प्रश्नकर्ता : आ जाता है न!

दादाश्री : मतलब आज्ञा ही शुद्ध उपयोग है न, आपको क्या लगता है? कि आज्ञा फिर से सुधारनी होगी, रिमॉल्लिडिंग करनी पड़ेगी?

प्रश्नकर्ता : कुछ शेष रहता ही नहीं।

दादाश्री : हाँ, धीझ आर द फन्डामैन्टल सेन्टेन्सिस। यह क्या है? सारे वर्ल्ड को तारनेवाले सेन्टेन्स (वाक्य) हैं। व्यवहार-निश्चय के भेद सहित है। वर्ना दूसरे वाक्य या तो इस गड्ढे में होते हैं या उस गड्ढे में होते हैं।

इन पाँच वाक्यों में सारे संसार का सारा साइन्स शमा जाता है। कोई बात उसमें बाकी नहीं रहती है। इन पाँच वाक्यों में सारे शास्त्र समा जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : सारे शास्त्रों का यह दोहन है ऐसा कहे तो चले?

दादाश्री : सारे संसार का दोहन ही है यह। भगवान महावीर के पैंतालीस आगमों का दोहन। पाँच

आज्ञा में सब समा जाता है। यह सब तो अभी स्पष्टीकरण के लिए, समझने के लिए बता रहा हूँ। बाकी बारीकी से देखा जाये तो सारी चीजें समा जाती है। कोई चीज़ शेष नहीं रहती।

अक्रम से व्यवहार में निश्चय का अवतरण

यह तो विज्ञान है। विज्ञान यानी विज्ञान, विज्ञान में कोई फर्क नहीं होता है और है पूरा सैद्धांतिक, जिसमें किसी जगह ज़रा-सा भी विरोधाभास नहीं होता और व्यवहार में फिट होता है, निश्चय में फिट होता है, सब जगह फिट होता है। केवल लोगों को फिट नहीं होता है, क्योंकि लोगों की लोकभाषा होती है। लोकभाषा और ज्ञानी की भाषा में बड़ा अंतर है। ज्ञानी की भाषा कितनी अच्छी है, जिसमें कोई अड़चन ही नहीं है। ज्ञानी ब्यौरेवार सारे स्पष्टीकरण दें, तब हल निकलता है।

हमारा यह 'अक्रम विज्ञान' जगत में जाहिर हो तो लोगों का बहुत काम हो जाये, क्योंकि ऐसा विज्ञान निकला ही नहीं है। इस व्यवहार में, व्यवहार की गहराई तक कोई गया ही नहीं है। व्यवहार की गहराई का किसी ने किसी तरह का ज्ञान आज तक प्रकाशित ही नहीं किया है। निश्चय की ही सारी बातें बताई है। व्यवहार में निश्चय आया ही नहीं था। निश्चय, निश्चय में रहा था और व्यवहार, व्यवहार में रहा था। मगर यहाँ तो अक्रम विज्ञान ने व्यवहार में निश्चय लाकर रख दिया है। सारा नया शास्त्र ही खड़ा किया है और वह भी सायन्टिफिक है। इसमें किसी जगह कोई विरोधाभास नहीं है। मगर अब यह 'अक्रम विज्ञान' जाहिर कैसे हो? जाहिर होने पर जगत का कल्याण हो जाये।

प्रश्नकर्ता : उसका संयोग भी आ मिलेगा न?

दादाश्री : हाँ, आयेगा।

दादाश्री की अनुभूतियाँ, पाँच आज्ञा की

आज्ञा पालने पर निरंतर समाधि रहे, मोक्ष ही बरते। यह तो हमारी चखी हुई चीज़ दी है (हमें जो

ज्ञान प्राप्त हुआ वही आपको दिया है)। अनुभव की गई वस्तु दी है न?

प्रश्नकर्ता : आपने पाँच आज्ञा का अनुभव कैसे किया है?

दादाश्री : (महात्माओं को इंगित करते हुए) इन सभी ने जैसे अनुभव किया है वैसे ही। उनको पूछकर देखिये, पता चल जायेगा।

प्रश्नकर्ता : आपने कहा था कि आप अक्रम में से नहीं आये?

दादाश्री : नहीं, मैं क्रमिक में से आया हूँ।

प्रश्नकर्ता : मतलब आपको अक्रम का अनुभव नहीं है, मगर अक्रम ज्ञान के द्वारा आपने देखा है, ऐसा आपने कहा था।

दादाश्री : हाँ, ठीक है। हमने क्रमिक में से यह कमाई की थी और उदय में आया अक्रम, मगर मेहनत बहुत की थी।

प्रश्नकर्ता : यानी आपके अनुभव अलग तरह के होंगे न, दादाजी?

दादाश्री : मगर वह तो बड़ी लम्बी कहानी बन जाये, बड़ा इतिहास हो जाये। वह कुछ दो शब्दों में कही जाये ऐसी वस्तु नहीं है।

प्रश्नकर्ता : दादाजी, पाँच आज्ञा में से कौन सी आज्ञा आपको ज्यादा अनुभव में आई थी?

दादाश्री : 'व्यवस्थित' की आज्ञा सब से ज्यादा अनुभव में आई थी। 'व्यवस्थित' पहले से लाया था। इसलिये पाँच आज्ञा में 'व्यवस्थित' की खोजबीन है। मूल खोजबीन हमारी 'व्यवस्थित' की है। वर्ना बिना भविष्य की चिंता का यह जगत ही नहीं है। वह अग्रशोच कहलाये। अग्रशोच माने 'क्या होगा?' सारा संसार ही, ये साधु-सन्यासी, सभी उसमें हैं। उसकी चिंता में ही होते हैं। वह चिंता, अग्रशोच, इस व्यवस्थित ने उड़ा दिया है।

दादावाणी

प्रश्नकर्ता : उसे उड़ा दिया मतलब सारे प्रॉब्लेम समाप्त हो गये?

दादाश्री : सारे प्रॉब्लेम छूट गये और ऊपर से अनुभव में आया कि, 'नहीं, हकीकत में 'व्यवस्थित' ही है।' बनाबनाया होता तो उड़ जाता।

प्रश्नकर्ता : फिर यह पहली दो आज्ञाएँ तो आपको १९५८ के बाद, ज्ञान होने के बाद अनुभव में आई होगी न?

दादाश्री : हाँ, ज्ञान होते समय अनुभव में आया। यह (रियल) क्या है और यह (रिलेटिव) क्या है, वह अनुभव में आया।

प्रश्नकर्ता : उसके पहले उन दो आज्ञा का कोई ख्याल था क्या?

दादाश्री : यह व्यवहार और यह निश्चय इतना समझ में रहता था।

प्रश्नकर्ता : एक्झेक्ट तो बाद में, ज्ञान हुआ उस समय दिखाई दिया न?

दादाश्री : वहीं, ज्ञान के समय ही अनुभव में आ गया।

प्रश्नकर्ता : फिर फाइलों का समभाव से निपटारा...?

दादाश्री : वह तो पहले से ही करते आये थे न, ज्ञान नहीं था तब भी। कृपालुदेव को पढ़ते थे और हल लाया करते थे। मतलब पूर्णरूप से समभाव से निपटारा नहीं मगर आमतौर पर मन में अकुलाकर समझौता किया करते थे। मन में अकुलाकर ठंडा किया करते थे। पर यह तो हमारा 'समभाव से

निपटारा' उसमें मन की अकुलाहट नहीं और कुछ भी नहीं। आशीर्वाद देकर शुद्ध किया करना।

प्रश्नकर्ता : यह आशीर्वाद के साथ समभाव से निपटारा एक विशेष बात है। और आपका शुद्धात्मा का बहीखाता कब खुला?

दादाश्री : ज्ञान हुआ उसी दिन से ही।

प्रश्नकर्ता : दादाजी, हमने तो आपके दर्शन करके शुद्धात्मा के बहीखाते में रकम जमा की। आपने कैसे की?

दादाश्री : जमा करना कैसा? एक ही दिन में प्रकट हुआ वहाँ! कल 'ए.एम.पटेल' थे और आज शुद्धात्मा हो गये, दृष्टिमात्र से। दृष्टि परिवर्तन हो गया वहाँ?

प्रश्नकर्ता : आप की दृष्टि एक ही घंटे में कैसे दृढ़ हो गई?

दादाश्री : कृपा से क्या नहीं होता? भगवान की कृपा उतरने पर क्या संभव नहीं?

प्रश्नकर्ता : हम पर तो आपके अंदर जो प्रकट हुए हैं उनकी, दादा भगवान की कृपा उतरती है, पर आप पर किसकी और कैसे उतरी?

दादाश्री : मुझ पर कैसे उतरी इसका कैसे पता चले? मुझे किसी ने सारे ब्रह्मांड में घुमाया और संसार के सारे रहस्यों का ज्ञान खुल गया! इसलिये तो (यह जो ज्ञान हुआ उसे) मैं 'बट नैचुरल' (नैसर्गिक रूप से) कहता हूँ न!

जय सच्चिदानंद

☞ 'दादावाणी' सामायिक हिन्दी तथा अंग्रेजी भाषा में हर महिने की १५ तारीख को प्रकाशित होता है। अगर 'दादावाणी' सामायिक आपको देर से मिलता है, तो कृपया मैगजीन् के कवर पर अपना नाम-पता-पीनकोड जाँच करें। अगर उसमें कोई गलती नजर आये तो हमें संपर्क सूत्र के पते पर पत्र द्वारा तुरंत सूचित करें। अगर आपको मैगजीन् नहीं मिलता है, तो हमें पत्र द्वारा सूचित करें। आपका पत्र मिलने पर मैगजीन् अगर हमारे पास स्टोक में होगी तो दुबारा पोस्ट करने का प्रबंध किया जायेगा।

GURUPURNIMA 2007 - Chicago, USA

With the infinite grace of Param Puja Dada Bhagwan and Puja Niruma, the Gurupurnima is being celebrated in Chicago, USA, in the presence of Atmagnani Puja Deepakbhai Desai.

The mahatmas of the USA Midwest are honored to invite you and your family to participate in the grand celebration of this occasion. Dada Bhagwan's Gurupurnima is always an Alaukik experience of being blessed with the Darshan of the Absolute Soul - Dada Bhagwan...

Youth Shibir : July 23-24 (Separate for Male and Female - Age-15 to 25 Years)

Satsang : July 26-27 & 29 (10 am to 1 pm & 4 pm to 7 pm)

GURUPURNIMA : July 30 Monday (Gurupujan 7 am to 4 pm)

Venue : The Meadows Club of Rolling Meadows, 2950 West Golf Road, Rolling Meadows, Illinois 60008, Tel: 847-640-3200, e-mail : gp2007@dadagurupurnima.com

Gnanvidhi : July 28 (Satsang - 10 am to 1 pm & Gnanvidhi - 4 pm to 7 pm)

Venue : Holiday Inn of Rolling Meadows, 3405 Algonquin Road, Rolling Meadows, Illinois 60008, Tel : 847-259-5000, Fax : 847-259-6795

आत्मज्ञानी पूज्य दीपकभाई देसाई के सांनिध्य में, त्रिमंदिर अडालज में

गुरुपूर्णिमा कार्यक्रम - दिनांक १७ से १९ अगस्त

ज्ञानविधि - दिनांक २६ अगस्त, दोपहर ३-३० से ७

पूज्य नीरूमाँ को देखिये टी.वी. चैनल्स पर...

- भारत ✦ 'दूरदर्शन' (नेशनल) पर सुबह ८-३० से ९ (सोम से शुक्र) 'नई दृष्टि, नई राह' इसी समय देखिए, तमिलनाडु में तमिल में... आंध्रप्रदेश में तेलुगु में तथा केरल में मलयालम में...
- ✦ फिर से शुरू - 'Zee Gujarati' पर हररोज सुबह ७ से ७-३० (गुजराती में)
- ✦ 'दूरदर्शन' डीडी-१ प्रतिदिन दोपहर ३-३० से ४ (गुजरात में) (अन्य राज्यों में डीडी ११ पर वही समय)
- ✦ 'आस्था इन्टरनेशनल' प्रतिदिन रात १२-३० से १ (गुजराती में)

U.S.A. : ✦ 'TV Asia' Everyday 7 to 7-30 AM EST (In Gujarati)

✦ 'TV 39 (NJ)' Mon-Fri 6 to 7 PM & Sat 6 PM to 6-30 PM (In Gujarati)

Canada: ✦ 'ATN' Every Wed-Thu 8.30 to 9.00 AM EST

✦ समग्र विश्व में (भारत के अलावा) सोनी टीवी पर (सोम से शुक्र) सुबह ७ से ७-३०, (हिन्दी में)

✦ समग्र विश्व में (भारत के अलावा) 'आस्था इन्टरनेशनल' पर (सोम से शुक्र) रात ८ से ८-३०

पूज्य दीपकभाई को देखिये टी.वी. चैनल्स पर...

भारत ✦ 'दूरदर्शन' डीडी-११ पर प्रतिदिन रात्रि ९ से ९-३० - 'ज्ञानप्रकाश' (गुजराती में)

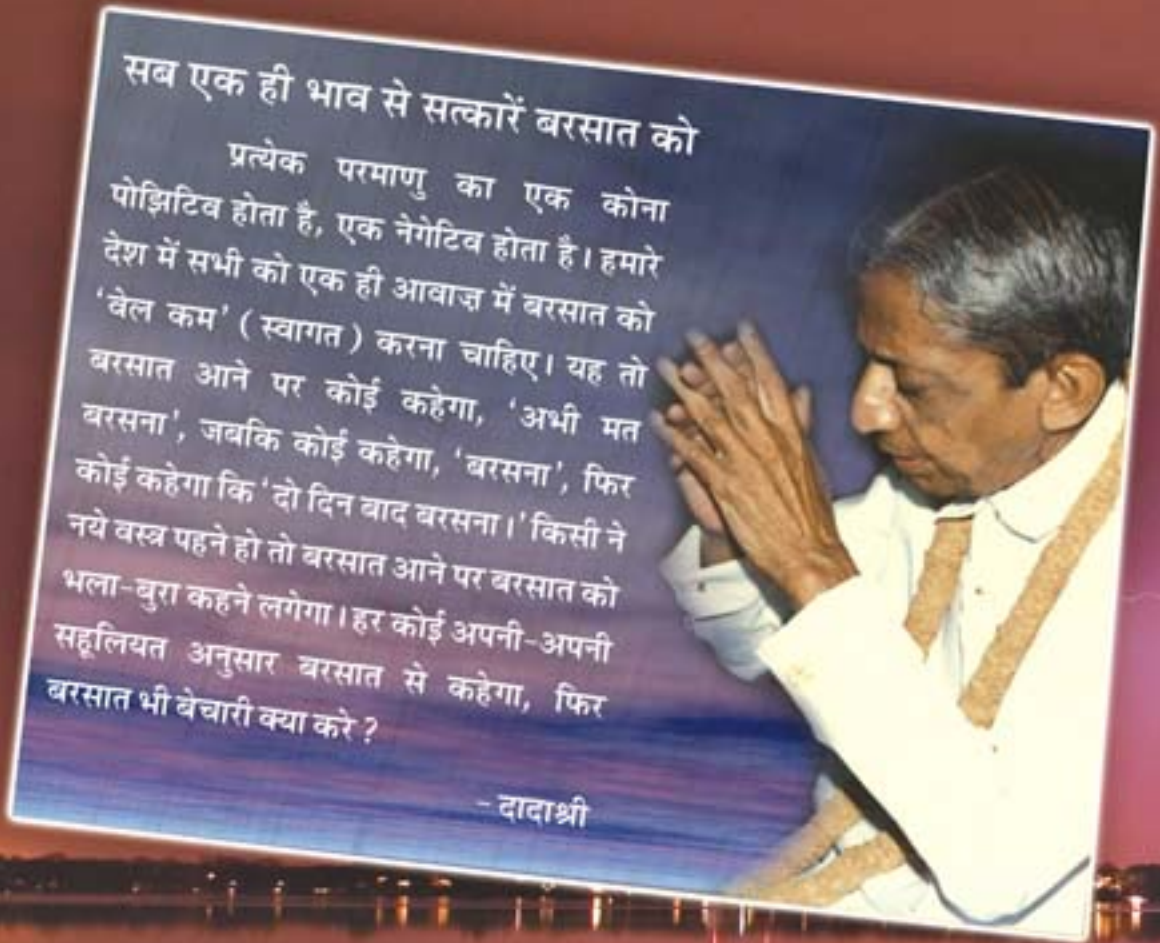
✦ 'आस्था इन्टरनेशनल' पर (सोम से शुक्र) रात्रि ११ से ११-३०, (शनि-रवि) सुबह ३-३० से ४

समग्र विश्व में (भारत के अलावा) 'आस्था इन्टरनेशनल' पर (सोम से शुक्र) शाम ६-३० से ७, शनि-रवि रात ८ से ८-३०

जून २००७
वर्ष-२, अंक ८

दादावाणी

RNI No. GUJHIN/17258/05
Reg. No. GAMC - 1500
Valid up to 31-12-08
Posted at AHD, P.S.O. Sorting Office Set - 1
on 15th of each month.



Publisher & Editor Mr. Deepakbhai Desai on behalf of Mahavideh Foundation
Printed at Mahavideh Foundation Printing Press :- Basement of Parshwanath Chambers,
Nr. New R.B.I. Income Tax Area, Ahmedabad - 14 and published from Registered Address of the Trust